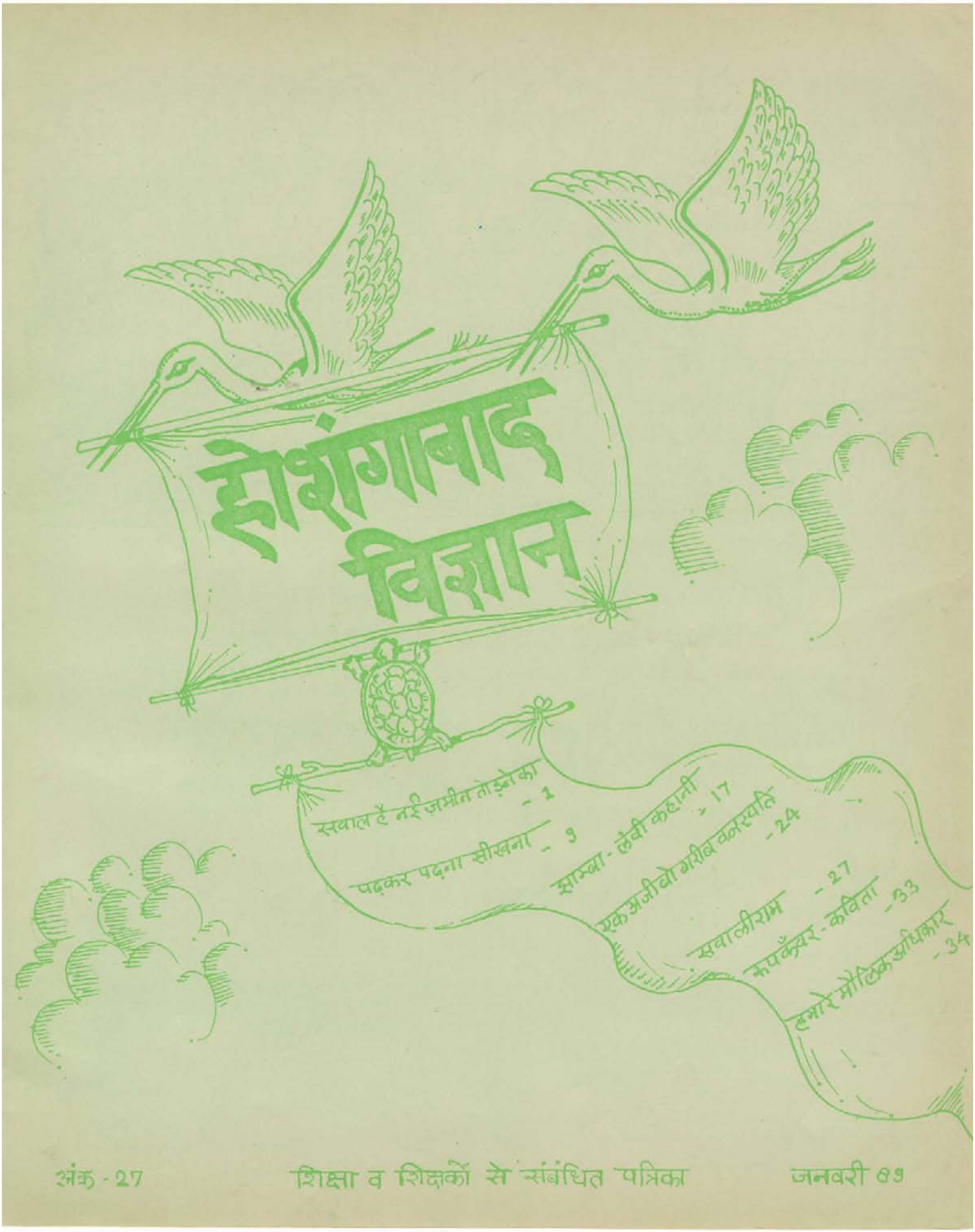

अंक - 27 शिक्षा व शिक्षकों से संबंधित पत्रिका जनवरी 89

यह दृश्य एक गरीब देश की मजबूरी का प्रमाण है या
बच्चों के प्रति हमारी निर्लज्ज उदासीनता का ?
शालाओं में बच्चों के लिये पर्याप्त सुविधायें हों तो उसे
पैसों का भौंडा दिखावा मानें या अनिवार्य जरूरतों
की पूर्ति - जिसे देश की सुरक्षा और विकास के
खर्चों का बहाना कर के काटा नहीं जा सकता ?

होशंगाबाद विज्ञान

होशंगाबाद और विज्ञान पढ़ाने तक ही सीमित नहीं है,
बल्कि शिक्षा में नये सोच और नवाचार का प्रतीक है।

संपादन : हृदयकांत दीवान सहयोग : ब्रजेश सिंह चित्रांकन : राजेश यादव
राघवेन्द्र तैलंग राजेश खिंदरी, लाल्टू कैरन

सवाल है नई ज़मीन तोड़ने का

कृष्ण कुमार

(राजस्थान प्राथमिक एवं माध्यमिक शिक्षा निदेशालय के त्रैमासिक मुख-पत्र "नया शिक्षक" के अप्रैल-जून,85 अंक में प्रकाशित कृष्ण कुमार के लेख का सार-संक्षेप।)

प्राथमिक शिक्षा के संदर्भ में बहस अक्सर इस मान्यता के साथ शुरू होती है कि भारत एक विकासशील देश होने के नाते इस पर जितना खर्च कर रहा है, उससे अधिक नहीं कर सकता । आर्थिक दबाव हमें विवश करते हैं कि प्राथमिक शाला की मौजूदा सुविधाओं के ज़रिए ही अधिक से अधिक बच्चों को बुनियादी कौशल सिखाने जैसी अत्यावश्यक प्राथमिकता का पालन किया जाए । यह तर्क दिया जाता है कि भारत की प्राथमिक शालाओं में अध्यापक, ब्लैक-बोर्ड, चॉक और पाठ्य पुस्तकों जैसी न्यूनतम आवश्यक चीजों से काम चलाना पड़ेगा ।बैठने के स्थान तक को नज़र-अंदाज़ किया जाता है।कहा जा सकता है कि प्राथमिक पाठशालाएं मितव्ययिता की अंतिम सीमा तक पहुंची हुई हैं ।

इस मितव्ययिता का एक पहलू है प्रति स्कूल अध्यापकों की संख्या । इस मामले में पिछले तीन दशकों में वस्तुतः कोई खास तब्दीली नहीं आई है । कुल स्कूलों की संख्या का एक तिहाई हिस्सा ऐसे स्कूलों का है जहां सिर्फ एक अध्यापक है । इसके बाद 27 ·/· स्कूलों में सिर्फ दो अध्यापक प्रति शाला हैं । यानी 60 ·/· स्कूलों में अधिकतम दो शिक्षक प्रति शाला हैं ।

सिद्धान्तः यह संभव है कि एक या दो अध्यापकों का स्टाफ एक प्राथमिक शाला चला सके । स्वीडन जैसे अत्यंत विकसित देश में ऐसी बहुत सी शालाएं हैं । मुझे वहां की ऐसी शाला में जाने का मौका मिला है और मैं हमारे यहां मध्य प्रदेश की एक-अध्यापकीय शाला में भी गया हूं । सुविधा-संपन्न होने की वजह से स्वीडन में ऐसे एक अध्यापक को बच्चों की शिक्षा में अधिकतर एक पर्यवेक्षक की भूमिका निभानी पड़ती है, क्योंकि बच्चे पुस्तकों, तस्वीरों आदि से अपना शिक्षण खुद ही करते हैं, जबकि मध्य प्रदेश की शिक्षिका को पांच कक्षाओं को पढ़ाना, पढ़ने-लिखने का काम देना और निरीक्षण करते रहना, कापियां जांचना, यह सब करना पड़ता है ।

दोनों जगहों पर शिक्षण का तरीका अलग था, क्योंकि दोनों जगह पाठ्यक्रम अलग-अलग थे । दोनों अध्यापकों का प्रशिक्षण भिन्न था- और दोनों की अपने उद्देश्य के प्रति दृष्टि अलग थी । लेकिन यह एक तथ्य है कि मध्य प्रदेश की शाला में शिक्षण प्रक्रिया में एक निर्णायक तत्व है शाला की भौतिक दशा ।

भारत की प्राथमिक शालाओं की भौतिक स्थिति बड़ी

निराशाजनक है। मैंने एन·सी·ई·आर·टी· की एक रिपोर्ट के आधार पर छः बिन्दुओं का चयन किया और एक सारणी तैयार की ।

सारणी से जो तस्वीर उभरती है, वह ऐसे तंत्र की है जिसमें अधिकांश शालाओं में इन न्यूनतम ज़रूरी चीज़ों का अभाव है । आश्चर्य इस बात का है कि ऐसी दशा में अध्यापक कैसे काम करते हैं।

इन आंकड़ों से उभरी तस्वीर का एक पहलू यह है कि देश के जिन राज्यों में प्राथमिक शालाओं में अच्छी सुविधाएं हैं, वहां साक्षरता की दर भी अधिक है । बच्चों का शाला में रुके रहना और वहाँ सीखी बातों का लम्बे समय तक उनके मन में रहना- इन दोनों का सीधा संबंध है प्राथमिक शालाओं की भौतिक दशा से । जब तक शैक्षिणिक रूप से पिछड़े

प्राथमिक शालाओं की भौतिक दशा

(हर राज्य में सुविधाओं से संपन्न प्राथमिक शालाओं की प्रतिशत संख्या)

राज्य	स्थायी भवन	पेयजल	शौच प्रबंध	ब्लैकबोर्ड	खेल मैदान	पुस्तकालय
आंध्रप्रदेश	45	41	05	48	51	30
असम	07	33	22	21	44	04
बिहार	24	28	02	49	16	34
गुजरात	74	51	23	100	64	65
हरियाणा	87	65	37	77	80	87
हिमाचल प्रदेश	12	38	05	66	59	77
जम्मू काश्मीर	23	34	06	85	40	44
कर्नाटक	72	23	04	85	46	40
केरल	78	87	79	93	69	59
मध्यप्रदेश	51	24	07	51	46	07
महाराष्ट्र	64	47	13	80	49	37
उड़ीसा	23	26	23	50	34	09
पंजाब	55	79	32	43	68	49
राजस्थान	65	53	15	64	46	39
तमिलनाडू	70	65	24	87	78	82
पश्चिम बंगाल	20	48	16	71	41	53
उत्तर प्रदेश	71	44	15	54	48	23
भारत के अन्य छोटे प्रदेशों एवं केन्द्र शासित क्षेत्रों समेत	47	41	15	60	47	29

इलाकों में प्राथमिक शालाओं की भौतिक दशा में प्रभावी सुधार नहीं होता, हम यह आशा नहीं कर सकते कि अध्यापक अपने उद्देश्यों में सफल हो सकेंगे ।

उच्च शिक्षा के विस्तार के साथ-साथ बहुत से राज्य इस क्षेत्र में प्राथमिक शिक्षा की तुलना में बहुत अधिक खर्च कर रहे हैं । ऐसा न सिर्फ उन राज्यों में हुआ है जहां साक्षरता अधिक है, बल्कि शैक्षणिक रूप से पिछड़े राज्यों में भी यही स्थिति है ।

केरल और महाराष्ट्र जैसे राज्य, जहां अधिकांश बच्चे स्कूल नहीं छोड़ते और जहां स्थायी साक्षरता दिखलाई पड़ती है, इन जगहों में उच्च-शिक्षा में प्रसार के साथ निम्न-वर्गों की हिस्सेदारी भी बढ़ी है । पर यह बात बिहार या उड़ीसा जैसे प्रदेशों में लागू नहीं होती जहां काफी अधिक संख्या में प्रतिवर्ष बच्चे पढ़ाई छोड़ देते हैं । इन राज्यों के कालेजों में गरीबों की उपस्थिति नाममात्र को होती है । यहां उच्च-शिक्षा के खर्च में बढ़ोतरी इसलिए होती है क्योंकि समाज के प्रभावशाली लोग इसकी मांग करते हैं । पर जहां तक खर्च का सवाल है वो तो राज्य के कोश से ही होता है । यह बात निःसंदेह दुर्बल श्रेणी के लोगों के हितों पर चोट करती है, जिनके लिए प्राथमिक शिक्षा भी एक सपने की तरह है ।

शिक्षा के भिन्न-भिन्न स्तरों का मूल्यांकन अपनी सामाजिक आर्थिक स्थिति और आवश्यकताओं के अनुरूप लोग अलग-अलग तरीकों से करते हैं । गांव के मज़दूरों के लिए प्राथमिक शिक्षा अपने-आप नहीं मिलती । उनके लिए यह एक आम बात है कि

अधिकांश बच्चे पांच-साल भी शाला में नहीं टिक पाते । प्राथमिक शिक्षा के मुकाबले उच्च-शिक्षा पर खर्च हो रही राशि की तुलना सार्थक तभी होगी, जब हम सामाजिक-आर्थिक वर्गों के बीच संगति का ख्याल रखें ।

उच्च शिक्षा में प्रति विद्यार्थी खर्च ज़्यादा है और इसीलिए यह अधिकांशतः आर्थिक रूप से मजबूत सामाजिक वर्गों में ही सीमित है । यह गौर करने की बात है कि उच्च शिक्षा में एक छात्र पर आने वाली लागत का अस्सी प्रतिशत राज्य द्वारा लगाया जाता है । यह किस हद तक न्यायसंगत है कि यह सहायता उस स्थिति में दी जा रही है जब प्राथमिक शिक्षा, जो कि बहुमत को प्रभावित करती है धन और ध्यान के अभाव में तड़परही है ।

अब इस बात में कोई आश्चर्य नहीं रहता कि शिक्षा पर प्रति इकाई खर्च में अविकसित और विकसित देशों में प्राथमिक स्तर पर बहुत बड़ा फर्क है । पश्चिमी यूरोप, तुर्की, यू·एस·ए·,कैनाडा,जापान, आस्ट्रेलिया में उच्च शिक्षा पर प्रति विद्यार्थी खर्च गरीब देशों की तुलना में साढ़े पांच गुना है, जबकि प्राथमिक स्तर पर यही अन्तर 33 गुना है । स्पष्ट है कि निर्धन देशों की तुलना में धनी देशों के विद्यार्थियों को मिलने वाली सुविधा में सबसे अधिक अन्तर प्राथमिक शिक्षा के स्तर पर है, जबकि माध्यमिक और उच्च शिक्षा की प्रति इकाई लागत में थोड़ी सी कमी भी अधिकतर लोगों को बुनियादी शिक्षा देने के लिए अतिरिक्त मद जुटा सकती है । अगर प्राथमिक शिक्षा क्षेत्र के निराशाजनक उत्पादन को सुधारना है तो शिक्षा पर कुल खर्च में से प्राथमिक शिक्षा के हिस्से को बढ़ाना होगा ।

धन और कल्पना शक्ति:

इतनी ही महत्वपूर्ण बात यह है कि मात्र अतिरिक्त धन जुटाना ही उन सभी समस्याओं का हल नहीं देगा जो प्रारंभिक शिक्षा के सामने हैं । यह विश्वास करना कठिन हो, पर सच है कि कई राज्यों में प्राथमिक शिक्षा को दिया गया पूरा बजट उपयोग में नहीं आता और उसका हस्तांतरण अन्य मदों में हो जाता है । 1980-81 में मध्य प्रदेश में प्राथमिक शिक्षा के लिए आवंटित बजट, करीब 9 करोड़ 80 लाख रूपयों का एक तिहाई, यानि की 3 करोड़ रूपये से ज़्यादा, वैसे ही पड़ा रहा।

शिक्षा पर खर्च करने का दायित्व जिस तंत्र पर है, उसमें इतनी योग्यता नहीं कि तनख्वाहें बांटने के बाद जो राशि बचती है उसका सदुपयोग वे कर सकें । इस मशीनरी को, लोगों को नौकरी देने और उन्हें तनख्वाहें देने के अलावा कोई काम करने के लिए बनाया ही नहीं गया था और न ही कभी इसमें कोई उचित परिवर्तन लाए गए थे। जब इसे नॉन-रैकरिंग फंड (जो साल के बाद स्वतः दुहराए नहीं जाते), जैसे आवास, पुस्तकालय, खेल के मैदान आदि के लिए पैसे मिले तो इनका निर्वाह अनुचित ढंग से किया गया । शोध या नवाचार तो इसके जन्म-काल में सुना ही नहीं गया था।

जब तक प्राथमिक शिक्षा से जुड़ी लालफीताशाही का पुनर्गठन नहीं होता प्राथमिक शिक्षा में उत्थान नहीं हो सकता । वेतन के अलावा अन्य महत्वपूर्ण ज़रूरतों का आभास भी अत्यंत आवश्यक है ।

पूछा जा सकता है कि बची हुई धनराशि का कम से कम मकानों की मरम्मत के लिए ही क्यों नहीं उपयोग किया गया ? मध्य प्रदेश में ही 25,000 से अधिक प्राथमिक शालाएं अस्थायी भवनों में हैं। निश्चित रूप से 3 करोड़ रूपयों से कम से कम 600 शालाओं की तस्वीर बदल गयी होती । और भी कई तरीकों से राशि का सदुपयोग किया जा सकता था । जैसे 20 लकड़ी के ब्लाक या 50

छोटी पुस्तकें हर शाला में भेजी जा सकती थीं । परन्तु ऐसे सुझाव शायद हास्यास्पद माने जाएंगे ।

किसी सक्रिय अफसर को ढूंढकर शिक्षा विभाग में लगा देना ही इस समस्या का हल नहीं । बहुत से राज्यों में इस विभाग में ऐसे अधिकारी हैं, लेकिन इससे व्यवस्था में नई क्षमताएं जन्म नहीं लेतीं अतः इन लोगों की मेहनत का प्रभाव अधिक देर तक टिकता नहीं ।

हमें खुद प्राथमिक शाला के बारे में अपनी अवधारणा में तीव्र परिवर्तन लाना चाहिए - यह किस तरह का स्थान हो और क्या-क्या चीज़ें करे ? अगर हमारे लिए प्राथमिक शाला एक ऐसी जगह हो, जहां बच्चे अपनी किताबें लेकर जाएं और अध्यापक को सुनने बैठ जाएं, तो हम कहीं के न रहेंगे । जब तक हम शाला को चार या आठ दीवारों और छत का एक मकान समझते रहेंगे, जब तक हम उसकी दुर्व्यवस्था को आर्थिक कारणों का परिणाम समझते रहेंगे, तब तक हम प्राथमिक शिक्षा में उन्नति नहीं ला पाएंगे ।

अच्छी शिक्षण स्थिति के लिए न्यूनतम जरूरी चीज़ें हैं- खेल सामग्री, बाल साहित्य, फर्नीचर, पानी, शौचालय और खेल का मैदान । क्या ये चीज़ें भारत के लिए बहुत ज्यादा महंगी हैं ?

असफलता के पथ से हटना :

यह तर्क कि एक गरीब देश साधनों की दृष्टि से गरीब प्रायमरी स्कूल ही दे सकता है, एक छलना है । यदि इस तर्क को स्वीकार कर लिया जाये तो फिर यह समझना मुश्किल होगा कि वही गरीब देश अपने हायर सेकेन्डरी स्कूलों को माइक्रो-कंप्यूटर कैसे उपलब्ध करवाने जा रहा है । शायद यह कहा जाये कि कंप्यूटर शिक्षा का प्रसार विदेशी सहायता के बल पर किया जा रहा है, तो ऐसी सहायता प्राथमिक शालाओं को सुसज्जित करने के लिए भी मिल सकती है । पर मैं शिक्षा के क्षेत्र में विदेशी सहायता प्राप्त करने की वकालत नहीं कर रहा, बल्कि मेरा तो यह विश्वास है कि प्राथमिक शालाओं को मानवीय रूप देने के लिए हमें किसी सहायता की जरूरत नहीं है । असल मुद्दा यह नहीं है

प्राथमिक शिक्षण में खर्च (1978-79)

	रु. (करोड़ों में)	कुल का प्रतिशत
शिक्षकों की तनख्वाह	621.84	95.3
प्रशासन और देखभाल	12.131	1.9
अन्य	7.342	1.1
पूंजी	11.393	1.7

स्त्रोत: "ऐन ऐनालिसिस आफ चिल्ड्रेन इन इंडिया", नई-दिल्ली: यूनिसेफ, 1984

कि पैसा कहां से मिले, असली चीज़ है हमारी प्राथमिकताएं और हमारी मौलिक सूझ । प्राथमिकताओं का सही बोध तो मानो हमें है ही नहीं, सिर्फ दबाव पड़ने पर ही कुछ करते हैं । क्या प्राथमिक शिक्षा के लिए ऐसे दबाव पैदा करना संभव है ?

ऐसे दबावों को उत्पन्न करने वालों के शिविर में अपनी मांगों के बारे में स्पष्ट समझ होनी चाहिए अभी इस तरह के प्रयास बुनियादी कौशल, अच्छी पाठ्य पुस्तक और अध्यापकों के पुनर्प्रशिक्षण के झाड़ में फंसे रहे हैं ।

अनुभव से पता चलता है कि "बुनियादी कौशल" हवा में विकसित नहीं किए जा सकते । पढ़ने, लिखने और गणित की ये बुनियादी कुशलताएं अलग से मिली कुशलताएं नहीं होतीं, बल्कि ये सर्वांगीण विकास का अंग होती हैं ।

विकास की पूर्ण प्रक्रिया एक औसत भारतीय प्राथमिक शाला में, जो कि सूनी है, उदास है और जिसका वातावरण उत्पीड़क है, संभव नहीं । जिन चीजों से यह विकास होता है, वे हैं अच्छा बाल साहित्य और विश्वस्त अध्यापक द्वारा दैनिक गतिविधियों का विविधता-पूर्ण आयोजन ।

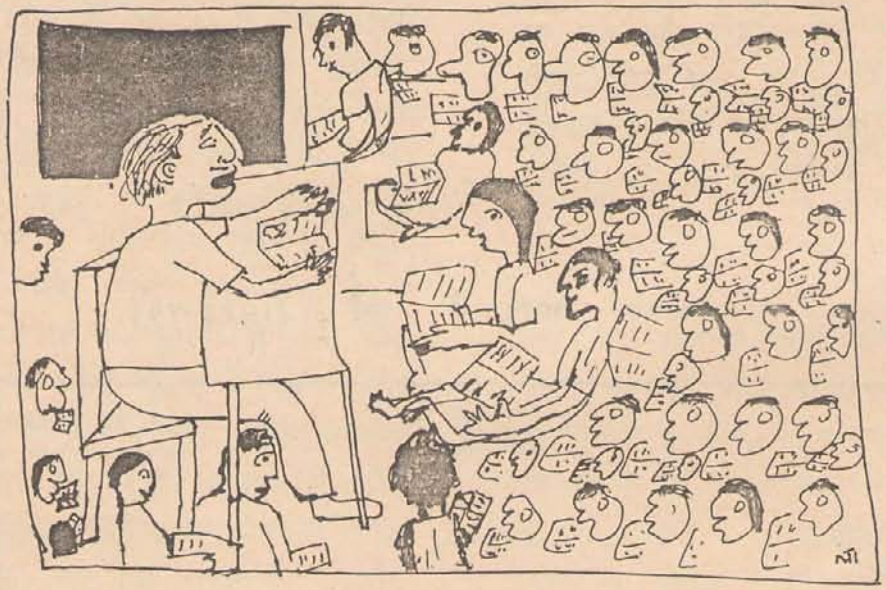

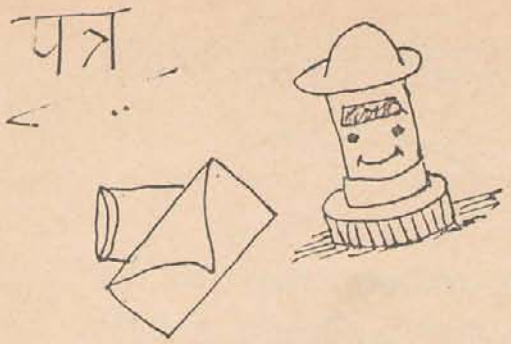

इन हालातों में···।

प्रिय भाई,

एक सहायक शिक्षक को दैनिक भत्ते के रूप में मात्र रू·8/- प्रतिदिन मिलते हैं वह भी 7 दिन के बाद 7·50 रू· प्रतिदिन कर दिया जाता है। इस पर भी शासन 10% कटौती करता है। अर्थात 8 रूपये के स्थान पर मात्र रू·7·20 पैसे और 7 दिन बाद 7·50 रू· के स्थान पर 6 रू·75 पैसे ही शिक्षक को मिलते हैं।क्या आपने इस ओर ध्यान दिया है। क्या इतने में शिक्षक अपनी व्यवस्था जुटा सकता है।

मैंने सत्र 86 के उज्जैन शिविर में भाग लिया था। जिसमें मुझे यात्रा भत्ता अग्रिम के रूप में रू·300/- शाला से दिये गए थे। जो नवम्बर,86 के वेतन से पूरे के पूरे एक किश्त में काट लिए गए। जबकि मैंने आवेदन में तीन किश्तों में काटने का अनुरोध किया था। तथा माह जून का वह यात्रा भत्ता बिल अगले वर्ष मार्च माह में जाकर अंतिम स्थिति में 10% कमीशन पर निकल सका था।

मेरे वर्ष भर टी·ए·लगभग 600-700 रू· के आसपास होता है और संगम केन्द्र पर अलॉटमेंट मात्र 500 रू· का आता है। इस पर भी यदि शिविर में उपस्थित हुआ तो इसके अतिरिक्त, पर अलॉटमेंट वही।

इस सत्र 88-89 में अभी आज दिनांक 16·3·88 तक अलॉटमेंट नहीं है। प्राचार्य महोदय अन्य मद के जैसे उच्च श्रेणी के अथवा नॉन-प्लान के अलॉटमेंट से मेरा टी·ए·नहीं निकालते जबकि इसके पूर्व मेरे अलॉटमेंटसे उच्च श्रेणी वालों के टी·ए·निकाले गए हैं। बिल लम्बित हैं।पर इस पर कोई ध्यान नहीं देता।

इस संगम केन्द्र पर माध्यमिक विभाग नहीं है इस कारण मेरा विज्ञान शिक्षण का कार्य नहीं हो पा रहा है। संगम केन्द्र पर इंगेजमेंट में ही मेरा समय व्यतीत होता है। जिसमें न तो मैं छात्रों का हित कर सकता हूं न ही स्वयं का हित कर पा रहा हूं।

अतः इस स्थिति में क्या मैं शिविर में उपस्थित होऊं, यह आप स्वयं विचार करें।

—एक सहायक शिक्षक

उक्त शिक्षक से हमने होविशिका प्रशिक्षण शिविर में आने या न आने के बारे में पूछा जिसके उत्तर में हमें यह पत्र प्राप्त हुआ।

-सम्पादक

श्री मान सम्पादक महोदय,
होशंगाबाद विज्ञान पत्रिका,

विषय - होशंगाबाद विज्ञान अंक 1988

महोदय

उपरोक्त विषयान्तर्गत आपका ध्यान इस अंक की ओर आकर्षित किया जा रहा है।

मैंने होशंगाबाद विज्ञान पत्रिका का अगस्त,88

का अंक पढ़ा, जिसमें श्री सुशील जोशी का लेख "कुछ पिटे हुए अनुभव" पढ़ा। जिसमें कुछ बातें सत्य से परे हैं। जब मैं पत्रिका के इस लेख को पढ़ने लगा तो पढ़ते-पढ़ते मुझे ऐसा लगने लगा कि जो पत्रिका शिक्षा व शिक्षकों के लिए रचनात्मक होती हुई दिखाई देती है। उसमें जब इस प्रकार के अव्यवहारिक और घटिया लेख लिखे जाने लगेंगे तो यह पत्रिका भी अन्य पत्रिकाओं के समान केवल कागज मात्र ही रह जावेगी।

श्री सुशील जोशी के लेख से शिक्षक समाज को निश्चित ही ठेस पहुंचेगी। यदि शिक्षक अपने अनुभव के आधार पर यह लिखता है तो ये घटनायें अपवाद स्वरूप हो सकती हैं तथा यदि इस प्रकार की कोई घटना होती भी है तो पूरे शिक्षक समाज को दोषी नहीं ठहराया जा सकता है।

अतः हमें आपसे आशा ही नहीं अपितु पूर्ण विश्वास है कि भविष्य में आप इस प्रकार के लेखों के हर पहलू पर विचार करके ही पत्रिका में शामिल करेंगे।

पत्र के संतोषप्रद उत्तर की प्रतीक्षा में।

-आपका
शिव नारायण शर्मा
अध्यापक-मा0वि0 खटसेड़ा
वृत- सोनकच्छ
जिला- देवास (म0प्र0)

माथा पच्ची

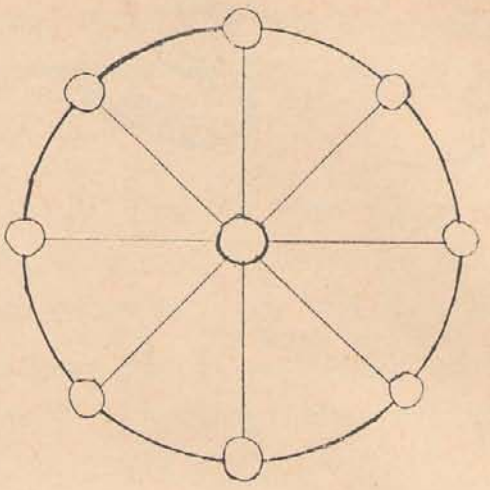

ऊपर दिए गए चित्र में 1 से 9 तक के अंक इस प्रकार से रखिए कि बीच के गोले में एक अंक हो और बाकी अंक चारों ओर के घेरों में आयें। वृत्त के हर व्यास पर जो तीन अंक हों उन का जोड़ 15 होना चाहिए।

1. अगर आप पृथ्वी की भूमध्य रेखा पर पूरा चक्कर लगायें तो आप के सिर का ऊपरी सिरा एक ऐसा वृत्त बनायेगा जिसकी परिधि पैरों के द्वारा बनाये वृत्त से अधिक होगी। बताइये यह अन्तर कितना होगा ?

2. अगर आप के शहर में एक बहुत ऊंचा घंटा-घर या इमारत है जिसकी ऊंचाई आप नहीं जानते हैं और अगर आप के पास इमारत की फोटो है तो क्या आप उस की मदद से इमारत की ऊंचाई पता कर सकते हैं ? कैसे ?

3. अगर एक बड़ी ईंट का वजन 4 कि.ग्रा. है तो उसी पदार्थ की बनी एक छोटी ईंट का वज़न कितना होगा जिसकी लम्बाई, चौड़ाई और ऊंचाई तीनों बड़ी ईंट की अपेक्षा चार गुना कम है ?

पढ़कर पढ़ना सीखना

लेखक - फ्रैंक स्मिथ

फ्रैंक स्मिथ स्कूलीय शिक्षा, बच्चों की क्षमताओं, उनकी सीखने की प्रक्रियाओं आदि पर खोजबीन करते रहे हैं व उनके बारे में लिखते भी रहे हैं इस लेख में उन्होंने अपने एक ऐसे ही प्रोजेक्ट की अनौपचारिक रपट प्रस्तुत की है। वो यह देखने की कोशिश कर रहे थे कि एक 3-4 वर्ष के बच्चे के लिए जिसे अभी पढ़ना नहीं आता, उसके आसपास दिखने वाली छपीछपाई और लिखी हुई भाषा का क्या महत्व होता है।

इस प्रयोग में फ्रैंक स्मिथ एक साढ़े तीन साल के बच्चे को एक बहुत बड़ी दुकान (सुपरमार्केट) में ले गए और वहां पर उससे विभिन्न सवाल पूछे।
साथही उन्होंने इस पूरी प्रक्रिया को विडियो केमरे पर भी उतार लिया ताकि बाद में आराम से उसका विश्लेषण कर सकें।

हमारे लिए यह रपट इसलिए महत्वपूर्ण है क्योंकि आजकल के जमाने में एक कस्बाई बच्चे का भी अपने आसपास की रोज़ाना जिन्दगी में छपी हुई चीजों से तकरीबन हर समय सामना होता रहता है। शायद हमें भी उनका महत्व आंकने की कोशिश करनी चाहिए।

शैक्षिक विकास की किस अवस्था में कहा जा सकता है कि बच्चे ने पढ़ना शुरू कर दिया है ? बच्चा औपचारिक रूप से पढ़ना शुरू करे, उससे पहले ही क्या पढ़ने की बुनियाद देखी जा सकती है ?

मेरा यह तर्क रहा है कि बच्चे पढ़ना, पढ़कर ही सीखते हैं और शिक्षक का पहला सरोकार बच्चे को अधिक से अधिक पढ़कर सुनाना होना चाहिए, इसके पहले कि वे स्वयं आगे बढ़ सकें । यदा-कदा इस पर यह आपत्ति उठाई गई है कि बच्चे पढ़ना तब तक शुरू नहीं कर सकते जब तक कि इस काम के लिए आवश्यक कुछ प्रक्रियाएं न सीख लें। आमतौर पर इसका मतलब ध्वनि के नियमों से होता है । कभी-कभी यह आपत्ति भी की जाती है कि "अर्थपूर्ण" पठन के लिए जरूरी है कि बच्चा कुछ शब्द साथ-साथ रखकर वाक्य पढ़ने के काबिल हो जाए । और कुछ शिक्षकों व सिद्धान्तकारों को भय है कि यदि शुरूआती पठन बहुत आसान बना दिया गया, तो बच्चे बौद्धिक रूप से आलसी हो जाएंगे और न्यूनतम प्रगति में ही खुश रहेंगे ।

इन सारे मुद्दों पर मुझे कुछ समझ बनाने का मौका तब मिला जब मैं पठन निर्देश के विषय पर एक टेलीविज़न फिल्म के निर्माण से जुड़ा था। जैसा कि शैक्षिक शोध और छोटे बच्चों की फिल्मों के साथ होता है, सबसे ज़्यादा शिक्षाप्रद घटनाएं तब हुई जब बच्चा अनपेक्षित और काम से हटकर कुछ कर रहा था । कुछ दिलचस्प घटनाएं तब

हुई जब कैमरा नहीं चल रहा था । इसीलिए एक अनौपचारिक रपट अनुचित नहीं होगी । चूंकि अनुभव बहुत कम समय का है इसीलिए ज़्यादा सामान्य सिद्धान्त का दावा करना गलत होगा । बहरहाल, जो निष्कर्ष मिले उनसे ज़्यादा औपचारिक शोध की आवश्यकता तो दिखती ही है ।

मामले का अध्ययन :

उद्देश्य स्पष्ट रूप से परिभाषित किए गए थे । मुझे "पढ़ना सीखने की दहलीज"पर खड़े एक बच्चे को सुपरमार्केट ले जाकर यह साबित करना था कि-

1. बच्चों की दुनिया में भी लिखित (प्रिन्ट) का मतलब हो सकता है ।

2. बच्चे न सिर्फ यह जानते हैं कि कैसे सीखें बल्कि यदि उनके आसपास की स्थिति में सीखने के लिए खास कुछ बचा न हो, तो वे सीखने के लिए कुछ और ढूंढने निकल पड़ेंगे ।

बच्चा था मैथ्यू, उम्र साढ़े तीन साल । टोरंटो (कनाडा) शहर के एक उपनगर के निवासी मध्यम वर्गीय परिवार के दो बच्चों में से वह बड़ा है।
इस पृष्ठ-भूमि के कारण यह संदेह न करें कि उसकी स्वाभाविक जिज्ञासा या सीखने की क्षमता उसकी उम्र के किसी लड़के या लड़की से भिन्न होगी। मैथ्यू के माता-पिता दोनों काम करते हैं और मैथ्यू अन्य कई बच्चों से ज़्यादा टेलीविज़न देखता है । किताबों में उसकी रुचि मात्र चित्र देखने या पढ़कर सुनाई जाने में है ।

मैथ्यू के परिवेश में मुद्रित (छपी हुई) भाषा की प्रमुखता दिखाने के लिए हमने उसे पहले सुपर-मार्केट में भटकने दिया और कैमरे से उसकी फिल्म

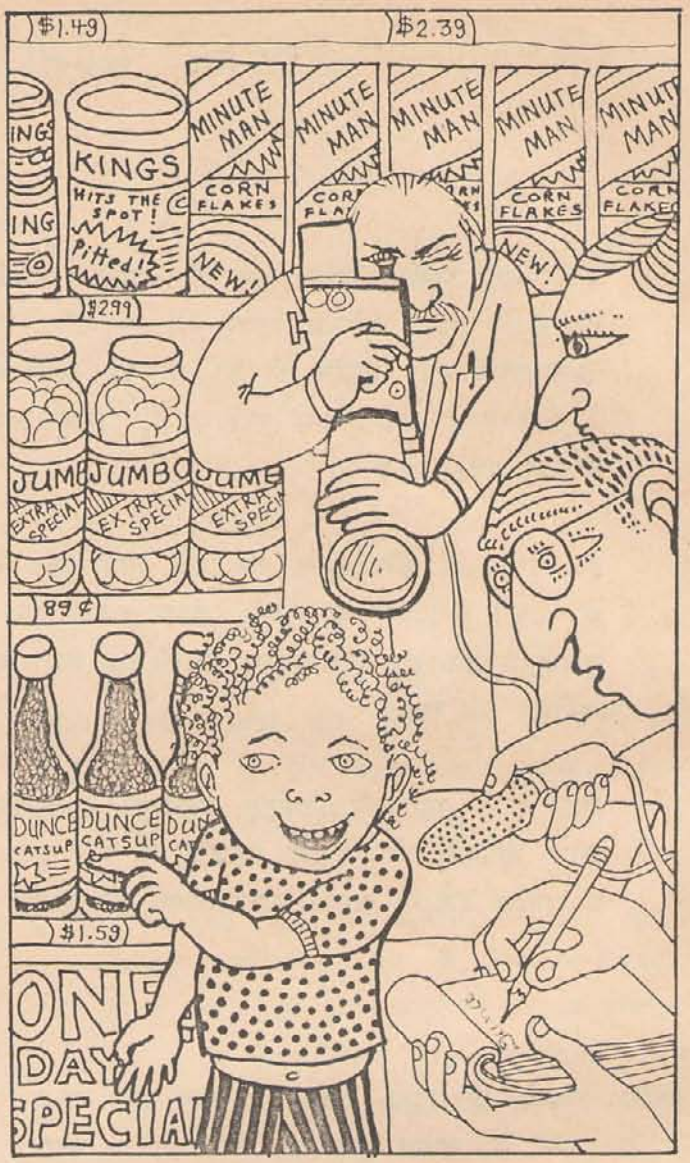

उतारते गए । मैथ्यू मार्केट में सब ओर से छापे से घिरा हुआ था । उसके चारों तरफ शब्द थे, सभी अर्थपूर्ण थे परन्तु अभी पहचानने लायक नहीं थे । वह जानता था कि सारे शब्दों का कुछ-न-कुछ मतलब है और वह लेबल देखकर एक प्रकार के सॉस (चटनी) को दूसरे से अलग कर सकता था। यह मैथ्यू ने कहां से सीखा ? संभवतः टेलीविज़न विज्ञापनों से जो कि बच्चों के लिए पठन संबंधी जानकारी का अपार स्रोत हैं क्योंकि विज्ञापनों में शब्दों को कई बार सार्थक रूप से लिखित और बोलकर दोनों तरह से पेश किया जाता है ।

बच्चे का सामना कितनी ज्यादा लिखित भाषा से है, यह एक वयस्क के लिए आश्चर्य का विषय होगा जो कि स्वयं इस पर सिर्फ सरसरी तौर पर ही ध्यान देते हैं । किन्तु वयस्क पाठकों ने छापे को इस अति की उपेक्षा करना सीख लिया है जबकि एक खोजी, सीखने वाले बच्चे के लिए यह बहुत ही उत्साहवर्धक स्थिति हो सकती है । इससे मालूम होता है कि एक बच्चे की दुनिया जैसे घर में बोली गई भाषा से परिपूर्ण होती है वैसे ही सार्थक लिखित भाषा से भी परिपूर्ण हो सकती है । आजकल माना जाता है कि बोलना सीखने के लिए यह एक अनिवार्य परिस्थिति है ।

कुछ शब्द ऐसे थे जिन्हें मैथ्यू देखते ही पढ़ सकता था और कुछ ऐसे थे जो उसने गलत पढ़े, जैसे"कॉर्न-फ्लेक्स" {मक्के का पोहा} जबकि उसके हाथ में जो डिब्बा था उस पर कार्न-फ्लेक्स के ब्रांड का नाम लिखा था । परन्तु वह यह काफी अच्छे से जानता था कि लेबल पर क्या लिखा होना चाहिए। इससे संकेत मिलता है कि कितनी अच्छी तरह से वह 'छापे का कार्य जानता है और शब्द को पहचानने से पहले ही उसे एक संभावित अर्थ भी दे सकता है ।

एक रोचक बात यह है कि मैथ्यू कुछ ऐसे शब्द नहीं पहचान पाया जिन्हें वह ध्वनि के आधार पर जानता था । जब पूछा गया कि उसने STOP का निशान सही कैसे पहचाना तो उसका कहना था क्योंकि उसके हिज्जे हैं P-O-T-S कहीं मैथ्यू में उल्टा पढ़ने की समस्या तो नहीं है ? जब गली के नाम का निशान दिखाकर पूछा गया तो उसने अपनी गली का नाम बता दिया जिसका उस बोर्ड पर लिखे शब्द से कोई संबंध नहीं था । क्या इसका मतलब यह है कि मैथ्यू पढ़ने के बारे में कुछ नहीं जानता था यह कि कुछ ही समय में वह ऐसे अतिरिक्त संकेत जुटाना सीख जाएगा जिनसे एक नाम को दूसरे नाम से अलग पहचाना जा सके क्योंकि उसे इस बात का अच्छा खासा आभास हो गया है कि शब्द का क्या-क्या मतलब हो सकता है ।

डिपार्टमेंट स्टोर में मैथ्यू को एक ग्रीटिंग कार्ड खरीदने के लिए ले जाया गया । जब पूछा गया कि उस विभाग के बोर्ड पर क्या लिखा है तो उसने सही बताया " CARDS " । क्या वह चालाकी कर रहा था ? या वह वास्तव में पढ़ने के एक पहलू का प्रदर्शन कर रहा था ? हालांकि वह उस शब्द को उसके संदर्भ के बिना शायद नहीं पहचान पाता। इसी प्रकारसे उसने खिलौना विभाग का नाम भी एकदम सही बताया हालांकि उसकी दिलचस्पी अक्षर बताने में नहीं थी । वह उसे मालूम थे और इसलिए उबाऊ थे ।

अब तक का सार यह है कि, मैथ्यू ने वे दोनों बातें सामने ला दी थीं जो कि हम लाना चाहते थे । एक छोटा बच्चा मुद्रित भाषा में डूब सकता है और हमारा बंदा तो निश्चित रूप से जानता था कि उससे अर्थ कैसे निकालना । वह यह भी जानता था कि कैसे सीखना है । उसे किसी ने नहीं बताया था कि शब्द पहचानने के लिए संदर्भ से संकेत लेने चाहिए । यहां इस बात पर विचार करना उचित होगा कि मैथ्यू की उम्र का एक बच्चा डिपार्टमेंटलस्टोर के बारे में कितना कुछ सीख सकता था, दुनिया की तो बात ही छोड़िए । वह उसकी संरचना से परिचित था, जानता था कि कहां घुस सकते हैं, कहां नहीं, चीज़ों को किस तरह जमाया गया है, कि उनकी कीमत अदा करनी होती है, कहां पैसा देना है, कैसे देना है और चिल्लर के लिए इंतज़ार करना है, वगैरह । वह एक वयस्क के बराबर जानता था । उसे ये सारे निर्देश कौन देता रहा था ?

जो वयस्क उसके पीछे-पीछे चल रहे थे, उन्हें अभी दो सबक और सीखना थे ।

पहली घटना थी जिसमें मैथ्यू ने अरुचि से वह किताब एक तरफ फेंक दी जिसको वह मिनटों पहले बड़े ध्यान से देख रहा था । हमने निष्कर्ष निकाला कि बच्चे ऐसी सिथति में ज़्यादा समय नहीं टिकेंगे जिसमें कुछ सीखने को न हो । उसने जल्दी ही समझ लिया था कि इस किताब के अध्ययन से और कुछ हासिल होने वाला नहीं है । परन्तु जब हमने इस स्थिति को कैमरे में उतारने के लिए वापिस जमाना चाहा, तो मैथ्यू ने दृढ़ता से उस किताब को छोड़ने से इन्कार कर दिया । कैमरा चलता रहा और मैथ्यू बगैर किसी बात से विचलित हुए, उस किताब में डूबा लेटा रहा । उसने कुछ नया ढूंढलिया था - उस किताब के कुछ पन्नों में बीच में छेद था और उनमें ऊंगली फंसाकर उसे खोलने का नया तरीका उसे मिल गया था वह यह देख रहा था कि क्या हर पन्ने पर ऐसा छेद है । इससे इस बात का पता चल रहा था कि ऐसा नहीं है कि यदि कुछ सीखने को नहीं है तो बच्चा उस वस्तु पर ध्यान नहीं देगा बल्कि वह यह बात दर्शा रहा था कि यदि वह कुछ सीखना चाहता है तो उसे ऐसा करने से रोका नहीं जा सकता ।

आखिर में मैथ्यू ने एक किताब उठाई जिससे वह परिचित था -"खुरचने की किताब" जिसमें फलों और दूसरी चीज़ों के चित्र होते हैं जिनको खुरचने से उस वस्तु की खुशबू आती है । कैमरा चल रहा था और मैं मैथ्यू का ध्यान बंटाना चाहता था क्योंकि फिल्म के इस हिस्से से लग सकता था कि हम खुशबू वाली किताबों की वकालत कर रहे हैं । परन्तु मैथ्यू को लगा कि मैं इस बात पर शक कर रहा हूं कि चित्र में से सचमुच खुशबू आती है । फिल्म चलते में ही उसने मुझे नाक नीची करके सूंघने को बाध्य किया । बच्चों में सार्वजनिक स्थानों पर वयस्कों को शर्मिंदा करने की आदत होती है इस सर्वविदित प्रकृति के अलावा उसने अपनी हरकत से और क्या दर्शाया ? उसने दर्शाया कि बच्चों के लिए सीखना एक जीवन्त अनुभव होता है और इसमें सबको मज़ा लेना चाहिए । वह मुझे कुछ सीखने के सन्तोष से वंचित नहीं रखना चाहता था ।

निष्कर्ष :

इस रपट की शुरूआत में मैंने कहा था कि मेरे ख्याल से इन संक्षिप्त अध्ययन से पांच मुद्दों पर कुछ कहा जा सकता है । पहला कि बच्चे संभवतः तभी पढ़ने की शुरूआत कर चुके होते हैं जब वे एक सार्थक रूप में छापे के प्रति सचेत होते हैं।

और दूसरा कि जब भी बच्चे छापे का मतलब निकालने के लिए जूझते हैं तो पढ़ने की शुरूआत दिखती है, जो कि वास्तव में शब्द पहचानने की काबिलियत से पहले की बात है ।

तीसरा, इस प्रारंभिक अवस्था में पठन की औपचारिक

क्रियाविधि न सिर्फ अनावश्यक है बल्कि बाधक भी हो सकती है । यह तो बच्चे की छापे से मतलब निकालने की काबिलियतहै जो उसे हमारे द्वारा दिए गए तरीकों का उपयोग करने में सक्षम बनाएगी।

चौथा, अर्थपूर्ण होने के लिए शब्दों का वाक्य में होना जरूरी नहीं है, उन्हें सिर्फ सार्थक संदर्भ में होना चाहिए । शब्दों को अर्थ तो पाठक देते हैं।

और अंत में, यह भय निराधार है कि वयस्कों से बहुत सहायता मिलने से बच्चे की सीखने की क्षमता दब जाएगी । यदि बच्चे किसी पाठ को समझ गए हैं और अब उसमें कुछ सीखने को नहीं है, तो वे ऊब जाएंगे और आगे बढ़ना चाहेंगे । परन्तु वे तब भी ऊब जायेंगे जब वे कुछ नहीं सीख पा रहे क्योंकि उनसे कराए जा रहे काम का मतलब ही उसके पल्ले नहीं पड़ रहा । अतः हमें बच्चों के अनमनेपन के इन दोनों संभव कारणों को पहचानना सीखना होगा ।

संक्षेप में, मेरे अध्ययन से मुझे मालूम पड़ा कि बच्चे पढ़ने के बारे में वयस्कों की मदद और जानकारी के बिना ही काफी कुछ सीख लेते हैं । परन्तु यदि वयस्कों को पढ़ने के बारे में कुछ सीखना है, तो उन्हें बच्चों की मदद लेनी ही होगी ।

भावानुवाद : सुशील जोशी

वर्ग पहेली

वर्ग पहेली की विधा अंग्रेजी में तो बहुत पुरानी है परन्तु हिन्दी में कुछ ही वर्षों से प्रयास शुरू हुए हैं। इस पहेली में एक वर्ग में काले व सफेद खाने होते हैं।सफेद खानों में अक्षर भरकर शब्द बनाना होता है। एक खाने में एक अक्षर या कभी-कभी आधा अक्षर। कौन से शब्द भरे जाएंगे? इसके लिए संकेत दिए जाते हैं। दो तरह के संकेत होते हैं- बाएंसे दाएं और ऊपर से नीचे। उदाहरण के लिए बाएं से दाएं संकेत क-। के शब्द का पहला अक्षर क-। अंकित खाने में भरा जाएगा। इसके बाद बाएं से दाएं चलते हुए बाकी के अक्षर भरे जाएंगे। काला खाना आने तक एक शब्द होता है। संकेत के आगे कोष्टक में लिखी संख्या दरअसल उस शब्द की अक्षर संख्या है।

आमतौर पर संकेत के दो हिस्से होते हैं। एक तो उस शब्द का अर्थ दिया जाता है। संकेत में ही उस शब्द को पाने का एक और तरीका दिया जाता है। कभी-कभी सिर्फ पर्यायवाची शब्द ही होता है। एक उदाहरण-संकेत है नया उल्टा,जंगल-जो शब्द आपको प्राप्त करना है उसका अर्थ है जंगल।अब उल्टा नया। नया मतलब नव। नव का उल्टा वन।वन का मतलब जंगल होता है।यही शब्द है। इसे उपयुक्त खाने में भी भर दिया गया है। कभी-कभी संकेत में दिए किसी और शब्द के अक्षरों को फिर से जमाकर नया शब्द बनाना होता है। कभी-कभी शब्द छुपा होता है। इसी प्रकार अन्य संकेतों पर भी दिमाग लड़ाइये। शब्द खोजिए, भरिए।

संकेतों के बाद जो अंक लिखे गये हैं वे उस शब्द में अक्षरों की संख्या दर्शाते हैं। आधे अक्षर को भी एक गिना गया है।

इस पहेली का कोई पुरस्कार आदि नहीं होता। इसे हल करने में जो मजा आता है, वही आपका पुरस्कार है।
अगले अंक में हल भी देंगे और हल करने के कुछ और गुर भी।

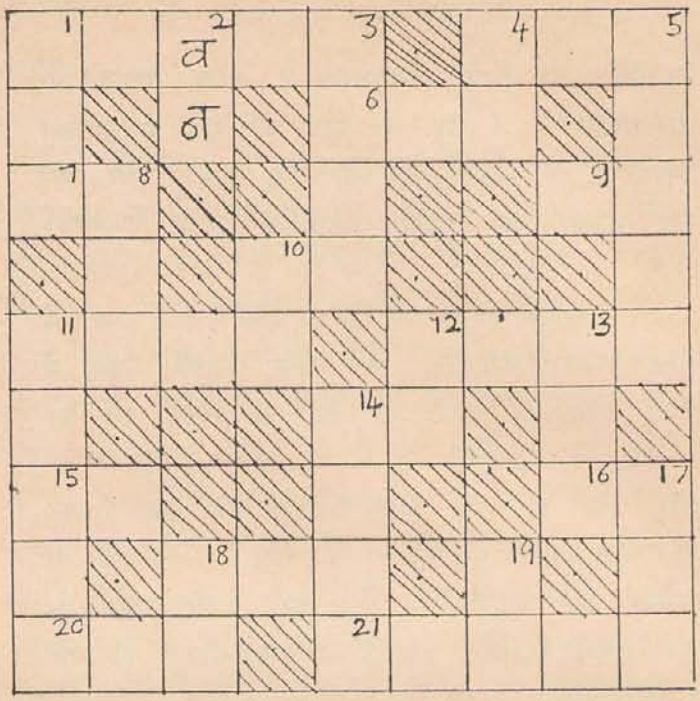

संकेत:बाएं से दाएं

1· प्रकाश का टकराकर वापिस लौटना (5)
4· वृंदावन में फसल साफ करने की एक विधि (3)
6· जीभ (3)
7· उल्टी दुनिया का नाप (2)
9· फसल की शुरूआत करना (2)
10· गलती, याद नहीं रहने पर (2)
11· आवागमन (4)
12· पेंदे में जमा होने वाला पदार्थ (4)
14· आंखों का एक क्षण (2)
15· लदा उल्टा खाद्य पदार्थ (2)
16· घोड़े को लगने वाला चुम्बक का रूप (2)
18· लोभी (3)
20· आधा रस तल के बीच, बना द्रव (3)
21· समीर कण गोलमाल से बीजगणित का एक तरीका (5)

संकेत:ऊपर से नीचे

1· नर पुष्प से निकलने वाली बच्चों की पत्रिका (3)
2· नया उल्टा, जंगल (2)
3· इससे फल नहीं बनता (4)
4· गेहूं का··· (2)
5· आयतन नापने का उपकरण (5)
8· एक धातु (3)
10· बीते हुए समय का काल्पनिक डर (2)
11· स्मरण शक्ति (5)
12· पेंदा (2)
13· एक प्रकार का कागज (3)
14· रजत अंक शब्दों में (4)
17· अम्ल और क्षार की मिलावट का परिणाम (3)
18· गुलाल में रंग (2)
19· पवित्र भोजन विज्ञान (2)

उर्दू की आखिरी किताब - इब्ने इंशा

अनुवाद - सुरजीत

प्रकाशक - प्रभात प्रकाशन,
चावड़ी बाजार, दिल्ली

मूल्य - 30 रूपए (हार्ड कवर)

पाकिस्तान और भारत में समान रूप से लोकप्रिय उर्दू के प्रख्यात व्यंग्यकार मरहूम इब्ने इंशा की यह व्यंग्यकृति व्यंग्य की गंभीरता के साथ-साथ सहज हास्य से भी भरपूर है । परंपरागत पाठ्य पुस्तकों की तर्ज पर लिखी यह पुस्तक समसामयिक राजनीति, समाज और मनुष्य पर कटाक्ष करती है । अंग्रेज तो कभी के चले गए किन्तु उनके द्वारा निर्धारित पाठ्यपुस्तकों का स्वरूप आज भी बरकरार है ।

यह पुस्तक बाकायदा "इतिहास", "गणित के नियम", "आरम्भिक विज्ञान", "कुछ शिक्षाप्रद कहानियां", "जीव जन्तु विज्ञान"....जैसे शीर्षकों में विभक्त है । इतना ही नहीं "पाठ" के अंत में "प्रश्नावली" भी दी है । "बाबू" (क्लर्क) तैयार करने की प्रणाली पर इंशा साहब का यह करारा व्यंग्य है । बिना किसी विश्लेषण के जानकारी देना और भाषा व गणित का सामान्य ज्ञान ही पाठ्य पुस्तक के ऐसे स्वरूप का उद्देश्य हो सकता है । औपनिवेशक शासन के लिए यह जरूरी भी था कि विद्यार्थी हर बात को दिए गए "तथ्य" रूप में स्वीकार करे ताकि चिन्तन की क्षमता उनमें कभी न आए इंशाजी का संकेत इस बात की ओर भी है कि वर्तमान शिक्षाप्रणाली का भी यही स्वरूप है ।

पुस्तक का प्रारम्भ "प्रार्थना" से किया गया है जो आम पाठ्य पुस्तकों में होता है। बीच-बीच में कार्टून चित्र भी दिए हैं । ये कभी हंसाते हैं तो दूसरी ओर तुरन्त सोचने पर मजबूर भी करती हैं । हमारी भोथरी हो चुकी पाठ्य पुस्तकों और उनमें पढ़ाई जाने वाली बातों व बेतुके प्रश्नों की वर्तमान में क्या उपयोगिता शेष रह गई है ? इस पर इंशाजी के व्यंग्य के नमूने देखिए- "अगर महमूद गजनवी हिन्दुस्तान पर सत्रह हमले करे तो अहमदशाह अब्दाली कितने हमले करेगा ?"

"खानदान मुगलिया (मुगलवंश) के कबूतरों के महत्व पर निबन्ध लिखो । कागज के सिर्फ दो तरफ नहीं।" जैसे प्रश्न हममें उन्मुक्त हंसी पैदा करते हैं तो ठीक दूसरी तरफ "क्या गुलामी गुलाम वंश के साथ ही खत्म हो गई ?" या..."जो अन्धे नहीं हैं वे भी रेवड़ियां अपनों में क्यों बांटते हैं ?" जैसे प्रश्न हमें तुरन्त मानसिक रूप से चैतन्य और सजग करते हैं ।

ये व्यंग्य हमें हंसाते हैं, गुदगुदाते हैं और हमारे भीतर प्रतिक्रया पैदा करते हैं । एक खूबी यह भी है कि ये पाठक को अपने साथ लिए चलते हैं कहीं कोई अवरोध नहीं एक सरल प्रवाह हमेशा

बन रहता है ।

इंशा साहब ने व्यंग्य की तलवार से किसी को नहीं छोड़ा है । समकालीन राजनीति और धर्म के पाखंड, नैतिक पतन, शोषण सभी पर भरपूर प्रहार किए हैं तो प्रकाशकों, शिक्षा जगत, साहित्य, कला, चाटुकारिता, अवसरवादिता पर भी प्रहार किए हैं । शिक्षा पर जरा इंशाजी का कटाक्ष देखिए"... 'हरारत' इसका मतलब है गर्मी । 'गर्मी' शब्द आसान है । इसे इस्तेमाल करें, तो खतरा है कि विद्यार्थियों को समझ में आ जाएगा और फिर शिक्षा का मकसद (उद्देश्य) खत्म हो जायेगा...।" एक अन्य जगह आपने लिखा है-"...नीले कबूतर की खास पहचान यह है कि वह नीले रंग का होता है । सफेद कबूतर प्रायः सफेद ही होता है ।"

हमारे समय और समाज की ये कितनी बड़ी विसंगति है कि योग्य और होनहार व्यक्ति भूखों मरते हैं, वहीं दूसरी तरफ अयोग्य और धूर्त लोग बड़े-बड़े पदों पर आरूढ़ होते हैं, उपाधियों से सम्मानित होते हैं । इस विडम्बना पर इंशा साहब का व्यंग्य देखिए- "इल्म बड़ी दौलत है, लेकिन जिसके पास इल्म होता है, उसके पास दौलत क्यों नहीं होती और जिसके पास दौलत होती है, उसके पास इल्म क्यों नहीं होता ?" इंशाजी ने क्षेत्रीयता, फिरकापरस्ती, न्याय व्यवस्था की देरी (संदर्भ-जहांगीर और बेबी नूरजहां), देश के कर्णधारों में व्याप्त कुर्सी की लड़ाई (अकबर के नौ रत्न) सभी को चटखारे ले-लेकर निशाना बनाया है । क्षेत्रीयता और फिरकापरस्ती पर आपका व्यंग्य देखिए-"मैं सिन्धी हूं, तू नहीं है/ मैं बंगाली हूं, तू बंगाली नहीं है/ मैं मुसलमान हूं..../ इसको तफरीक (मतभेद) पैदा करना कहते हैं । हिसाब का यह कायदा भी प्राचीनकाल से चला आ रहा है ।"

इंशाजी ने अपने व्यंग्यों में लोक जीवन में प्रचलित कहावतों को विशुद्ध हास्य के तौर पर प्रयोग किया है (तीतर, पिद्दी आदि) ।

सभी व्यंग्य अपनी अनूठी शैली एवं अन्दाज के कारण अपनी छाप छोड़ते हैं । अनुवाद की भाषा सरल और सहज है । ये व्यंग्य भारतीय समाज, राजनीति और आज के मनुष्य पर भी खरे उतरते हैं । इनसे यह स्पष्ट हो जाता है कि हिन्दुस्तानी और पाकिस्तानी लोगों की परंपराओं और संस्कृतियों में कोई फर्क वाकई नहीं है, जो फर्क दिखता है वह कृत्रिम रूप से बनाया गया है । कुल मिलाकर ये कहा जा सकता है कि यह पुस्तक समूची परम्परागत पाठ्य पुस्तकों का एक चुटीला तीखा कार्टून है ।

राजकमल पेपरबैक्स की ओर से इसी पुस्तक का प्रकाशन हुआ है । इसकी कीमत 10 रु. है । इन दोनों अनुवादों में कोई खास फर्क हमें नजर नहीं आया है । "नई दुनिया" में अब्दुल बिस्मिल्लाह द्वारा अनूदित इस प्रकाशन की समीक्षा निकली है।

-धर्मेन्द्र पारे

झाम्बा

झाम्बा· · · ।

अपना ही नाम उसने मन ही दोहराया। जब-जब भी वह परेशानी में घुलने लगता था तो आदतन उसके दिमाग में घूम-फिर कर अपना नाम एकाध बार जरूर टकरा जाता था। उसको लगता था कि ऐसे दुखी वक्त में जैसे खुद अपने आपको आवाज लगाकर वह कुछ कहना चाहता हो, ताकि वह अपनी भीतरी समस्या का कुछ हल पा सके और अपनी दिमागी खलबली से छुटकारा पा ले।

ऐसी ही किसी दिमागी खलबली से छुटकारा पाने का कोई रास्ता वह ढूंढ रहा था · · ·लेकिन रास्ता तो खत्म होकर हरिया पंडत के घेर में जा समाया था।

घेर के चबूतरे के सामने पहुंच कर वह ठहर गया।

घेर की बैठक खाली पड़ी थी। बैठक के दरवाजे बंद थे।पर ताला नहीं पड़ा हुआ था।बस,सांकल चढ़ी हुई थी।· · ·इसका मतलब यह था कि "पंडज्जी" घेर के पिछवाड़े वाले अपने घर में ही हैं।

इतना एकांत पाकर उसकी नजरों को जैसे पैर निकल आए और वे दौड़ने लगीं।· · ·दौड़ती हुई वे पहले बरामदे बिछी चारपाइयों पर लोट-पोट जा हुईं। फिर दोनों मूढ़ों पर जमकर बैठ गईं। अचानक एक मुंह उग आया और मूढ़े के सामने रखे हुक्के की नली से लगकर हुक्के में दम मारने लग गया।

ओ झाम्बे।· · ·सहसा उसने अपना ही नाम पुकारा और उसका हुक्के में दम मारने का वह खयाल बिखर गया।

मन ही मन अपने आपको कोसते हुए समझाया,"बेट्टे, पंडत का हुक्का छूना चमार की खात्तर जुलम है-जुलम। मरैगा? अपनी जात पै रह, जात पै।"जैसे इस तरह समझा कर उसने स्वयं को पूरी तरह सावधान कर लिया था।

गर्मी फैलती जा रही थी।

उसके स्याह गठे हुए बदन पर मोटे कपड़े का चिकटा हुआ गंदा बनियान था। दायीं बगल में हाथ घुसेड़ कर उसने जोर से खुजाया और फिर सिर के धूल भरे बालों में पांचों अंगुलियां डाल कर तेजी से झाड़ा लगाया। इसके बाद बनियान निकालते हुए एक लम्बी जम्हाई के साथ दोहराया,"राम तेरी माया।"

तभी पिछवाड़े के घर से पंडत जी निकल आए। झाम्बा को आया देख चिल्लाते हुए बोले, "झाम्बे।· · ·ओ हराम्मी के बच्चे, यो टैम है गोबर ठाने का?· · ·तू

कृष्ण सुकुमार

जन्म : 1954

शिक्षा : स्नातक

लेखन : कहानी, उपन्यास, कविता। अब तक कुछ रचनाएं विभिन्न पत्र-पत्रिकाओं में प्रकाशित।

संप्रति : रूड़की विश्वविद्यालय, रूड़की के लेखा विभाग में सेवारत ।

सम्पर्क :689, आजाद नगर, रूड़की-247667

छितेगा साले किसी रोज।"

इस पर झाम्बा सरलता से किसी बच्चे की तरह मुस्कुराया। दायें हाथ में लटके बनियान की जेब से माचिस और बीड़ी निकाली और बनियान को झटक कर नीम की एक झुकी हुई टहनी पर लटका दिया।

पंडत जी ने फिर नाराजगी प्रकट की,"तुम सालों गौरमिन्ट के दमाद बने बठ्ठे,दमाद।···यो हाल है थारा।"

झाम्बा ने होंठों में दबी बीड़ी बायें हाथ की अंगुलियों के बीच फंसा ली और दियासलाई की जलाई हुई बुझती तीली को फेंक कर अपनी परेशानी उकेरने का प्रयास करते हुए कहा,"चह जो कह लो पंडज्जी,थारी रैयत में रह रे हम। पर हम पंडज्जी पड़गे भारी मुसीबत में···समझ नीं आता क्या करें न करें।"

पंडत जी ने कुछ नहीं बोला। हुक्के की लम्बी नली मुंह में डालकर गुड़गुड़ाने लगे।

झाम्बा बीड़ी सुलगाकर नीम की छाँव में जा बैठा।

शायद हुक्के की चिलम में आंच मर गयी थी। इसीलिए गुड़गुड़ाहट के सिवा उन्हें कुछ हाथ न लगा। चिलम उतार कर उसे दोबारा सुलगाने के लिए जाते-वे झाम्बा को हिदायत देते गये "इसै सौरी को (बीड़ी को) जल्दी पी-पी ले। ढेर काम रुका पड़ा···गोबर ठाके जल्दी निबट। मैं इब आया बस चिलम भर कै।"

बीड़ी के दो-तीन कश जल्दीजल्दी खींच कर झाम्बा उठ खड़ा हुआ। गोबर से सनी-भंडी टोकरी उसने उठायी तो गोबर की भभकार उसकी नाक में चढ़ गई किन्तु जरासी देर में ही वह खुद ही जैसे इस बू में शामिल हो गया।

"झाम्बे···"

चौधरी सुखपाल का स्वर सुन कर वह चौंक पड़ा। उसने हाथ में उठाए गोबर को टोकरे में रखते हुए गर्दन घुमा कर देखा। चौधरी ही था।

"चौधरी सा,राम-राम।" सहमी हुई-सी अपनी मुस्कराहट को समेटते हुए उसने चौधरी का अभिवादन किया।

एक न किए हुए अपराध को जताने वाली झेंप के साथ उसकी नजरें झुकी हुई रहीं और बेचैन मन से वह अंगुलियों पर चढ़ा गोबर उतारने लगा।

चौधरी ने इधर-उधर देखते हुए पूछा,"कोई है नी?"

"पंडज्जी हैं जी···चिलम भरके इबी आने वाले हैं।" झाम्बा ने उत्तर में कहा।

चौधरी मूढ़ा खींच कर बैठ गया।

जब झाम्बा कूड़ी में गोबर का टोकरा पलट कर लौटा तो उसे चौधरी व पंडत जी आपस में बतियाते हुए मिले।

झाम्बा ने खाली टोकरी जमीन पर पटक दी। फिर हाथ झटक कर वह गोबर उठाने के लिए झुका ही था कि तभी "पंडज्जी" ने हाँक मार ली, "झाम्बे जरा सुनिये।"

झाम्बे को लगा, जिस मुसीबत के लिए वह सुबह से स्वयं को तैयार कर रहा था, वह इस समय सामने आ खड़ी हुई थी।···वह लगातार स्वयं को जैसे पुकारने लगा,झाम्बे।···वह काम छोड़,चौधरी और पंडत के सामने आकर चबूतरे की जमीन पर उकड़ूं बैठ गया।

पंडत जी ने हुक्के का धुआँ हवा में फैलाया और हुक्के की नली चौधरी की तरफ मोड़ते हुए झाम्बा पर एक पैनी दृष्टि फेंकी। और बोले, "क्यों रे झाम्बे, यो बात है?" कह कर पंडत जी की सवालिया नजर उस पर टिक गई। चौधरी सब चुपचाप हुक्का गुड़गुड़ाते रहे।

झाम्बा बुझ-सा गया चुप्प।

पंडत जी ने नजर गढाए हुए ही आगे पूछा, "तुन्नैं चौधरी का खेत काट लिया बतावैं ?"

झाम्बा हाथ जोड़कर गिड़गिड़ाते स्वर में बोला,"देखियो पंडज्जी···चह जो इलजाम मेरे पै लगा लो, पर चोरी-चकारी मन्नैं कभी अपनी जिन्दगी में ना करी। ··अर फिर चरी के खेत से चरी कूँ काट के मैं करता क्या···तम जानौ···"

चौधरी ने बीच में ही घुड़की देते हुए कहा, "ओ झाम्बेय।···देख,सोच समझ ले।"

झाम्बा की सारी व्यथा अब बह निकली थी। बोला, "सरकार, जिन्नैं भी म्हारा नाम लगाया, म्हारी दुश्मनी पै लगाया हैगा।··· मेरे कूँ तो तड़के ही पता लग लिया था इस झुट्टे इलजाम का।···मैं तो चौधरी सा' सवेरे सै या सोचते-सोचते मर लिया कि तम्हैं अपना मुंह किक्कर{कैसे} दिखाऊँगा।"

चौधरी बिगड़े बैल-सा ऐंठ गया--

'दिखै ओ चमट्टे,ढेर न चलावै हमें···हम भले ही शहर में रह रहे, पर गांव का सारा पता रहे हमें।"

"चौधरी सा'···चह जिसकी कसम खिला लो," झाम्बा ने बिनती भरे स्वर में समझाना चाहा।

"ओ···ओय···माच्चो' सीधा ही जा···नीं तो यों समझ ले, तेरी ऐसी की तैसी करा देंगे बहच्चो।" चौधरी के तेवर में गालियां उतरने लगी थीं।

"पीर बाबा की कसम पंडज्जी।मन्नैं चौरी नीं करी।··· और बोल्लो, चौधरी सा', पीर बाबा का तो किसी सै पार पाया न जावै।" झाम्बा के स्वर में दीनता थी।

"थारा दीन ईमान जानैं हम," चौधरी ने आँखें तरेर कर गुस्से में कहा, "तुम लोग ससुरों कसम खा के भी मुकर जाओ। तुम्हारा कुछ न बिगड़ै।··· तू ससुरे हमें यो चालाकियाँ दिखा-दिखा के मत ना चलावै। मैं नीं छोड़ूं तुझे।"

"दिखै ओ झाम्बे," पंडत जी ने फैसला करने के अंदाज से समझाना चाहा,"इबी तो मामला है म्हारे हाथ मैं। आपस की बात है। गलती हो भी जा। हो गई सो हो गई। इब भाई चोरी ना पकड़ी गई थी तो ना थी, पर इब जो पकड़ी गई तो मान लै।"

"अजी पंडज्जी, जिब मन्नैं कोइै···" झाम्बा ने समझाना चाहा लेकिन चौधरी ने उसे बोलने का मौका ही नहीं दिया।

चौधरी ने पूरे आवेश में कहा, " मान तो इसका बाप भी लेगा। पर खाली माननें सै काम नीं चलै। भरैगा भी यो।···हम नीं पुछते इससे, कि इसनै चरी काट कै कहां बेच ली। पर जित्ते की काटी-बेची, उत्ते के दाम भरे दे··· चल बात खतम।"

कहकर चौधरी रूका और हुक्के में एक दम मार कर अपने निर्णय का उपसंहार करते हुए बोला, "पर आइन्दा यो काम ना हो। ससुरो जिस थाली का खाना उसी का छेदना।"

झाम्बा सन्नाटे में आ गया।···सच्चाई पर किसी को यकीन ही नहीं।

मन ही मन "पीर जी" का स्मरण किया। सवा रूपए का प्रसाद बोला। और पूरे विश्वास के साथ फिर एक कोशिश की, "अजी साब, मैं गरीब आदमी···दाम भला किक्कर भरूँगा जी।"

"पंचैत बतावैगी यो तुझे बेट्टे।" पंडत जी ने व्यंग्य

कसा।

मगर चौधरी जैसे फट पड़ा ,"...पंचेत की छोड़ो... रपट पुलिस में करूँगा। जब पुलिस डंडा करेगी, सब उगल देगा हराम्मी। यो जात ऐसी है जो टेड्डी उंगली से समझै बात।"
पुलिस का नाम सुनकर झाम्बा पत्थर हो गया।

"चौधरी कहे जा रहा था, "समझा रै...ओ झाम्बे के बच्चेय।...पुलिस जब तेरे मुंह में मुत्तेगी, अर तेरी लुगाई को नंगा करेगी तब देखूँगा तेरी सच्चाई कूँ।"

झाम्बा पुलिस के डर से आतंकित हुआ सोचने लगा, पुलिस कूँ सच्च-झूठ से लेना-देना क्या। वो सच्चोई डंडा करके झूठ का सच उगलवा दे...सच का झूठ करना उसके बाएँ हाथ का खेल है। झाम्बे...झाम्बे...। जिब तेरे कूँ पुलिस की मार खाके भी या इल्जाम कबूलना पड़ेगा...तो चौधरी की बात मान के सस्ते में छूटने में क्या हरजा है रै झाम्बे? ..पुलिस तो मरन लैक छोड़ेगी, ना जीन लैक।

"बोल रै?" झाम्बा को चुप देख पंडत जी ने टोका।

चौधरी की दृष्टि भी अब फैसले के लिए झाम्बा पर जमी हुई थी।

झाम्बा कुछ पल बाद बोला,"चौधरी सा' चोरी तो मन्नैं कोई नीं करी, अकै सिर पड़ी कूँ तारूँगा। या थारा पिछले जनम का करजा था। इब तारूँगा। फिलहाल तो जी म्हारे पै एक धेल्ला है नीं।"

"हां-हां ससूरे बेच के सब उड़ा दिए होंगे ना...फोकट का माल था ना।" चौधरी ने गुस्से में कहा।

झाम्बा ने एक विनती की,"थारी बेगार कर लैंगे माफ कर दो...पैसा कहां से भरेंगे।"

"जरूर-जरूर," व्यंग्य से चौधरी ने कहा, "तू जाने ही कि चौधरी रहवै शहर में...अब तू बेगार के नाम पै मौज करियो।"
झाम्बा की आशाएं सूख गयीं।

अंत में एक माह की मोहलत मांगने पर चौधरी नरम पड़ गया। गांव से तो भाग नहीं जाएगा। मेहनत मजदूरी करके कुछ न कुछ देगा ही ला के।

घर पहुंचने पर झाम्बा को अपने घर की दीवारें ही घूमती नजर आने लगी।

कहां से देगा रकम?... न जाने किस कम्बख्त ने यह झूठा इल्जाम लगा कर दुश्मनी निकाली है। उसने कभी इस तरह किसी की चोरी नहीं की। चौधरी का खेत उसके घर के पास है,इसी का किसी ने फायदा उठाकर अपना "डांड"(दण्ड) उसके सर थोप दिया।

झाम्बा देर तक माथापच्ची करता रहा कि किसने उससे दुश्मनी निकाली होगी। पर वह कुछ भी न समझ सका।

उदास और उतरे हुए चेहरे को देख कर उस की पत्नी ने उसे टोका-"कुछ हुआ नी?"
"वो चौधरी नीं मानता।"
"फेर?"
"फेर क्या,भरनी पड़ेगी।"

"वैसेई भरनी पड़ेगी।...क्यूं भला? औरों का गू खाने कूँ रहगे हमी?"

"तू ज्यादा मतना बोला कर...मेरा मूड ठीक-नीं"

"तो किंधे तै भरैगा? बोल? जिब तन्नै चोरी नीं करी, मान्नै काहे कूँ?"
"जिब पुलिस डंडा करैगा,पता चल जागा तेरे कूँ।"

"तो पुलिस के डर तै भागा फिरे हैगा तू?···कल कूँ लोग और झुट्टे इल्जाम लगा-लगा के म्हारे मूँ में हगैंगे, अर तू चुप्प बट्ठा देखैगा। उमर भर बेगार करनी है क्या?"

कुछ देर के लिए झाम्बा निरूत्तर हो गया। औरत के बोल उसकी मर्दानगी के लिए जैसे चुनौती बन गये। पर निर्णय क्या ले?

बोला-"फेर···रस्ता क्या है? तुई बोल?"
"रस्ता क्या···झुट्टे इल्जाम अर जुलूम सह-सह कै जिन्दगी बसर करने तै चोक्खा तो या ढेर अच्छा है कि इस पुलीस की मार सह-सह कै मर जा। वैसेई कौन सी पुलिस रहम करै। किसी ना किसी मामलें में किसी ना किसी को पुलिस का डंडा सहन करना ही पड़े, मन्नें तो या देक्खा इस गाम में।··· सोई इब कै म्हारे सिर पड़गी।···देख लैंगे पुलीस कूँ···तू हमें कर दिये उस के आगै···लै ढा भई जुलुम,हम हैं तैयार।
अपनी औरत की मर्दागनी सुनकर वह देर तक अपने आप में खोया रहा। उसे लगने लगा था कि जैसे भीतर ही भीतर कहीं से खत्म होता हुआ वह लगातार टपक-टपक कर चू रहा था···उसने अपने को,टटोल कर यह महसूस करने की भी कोशिश की, कि छेद कहां है।

वह फिर जैसे स्वयं को पुकारने लगा था- झाम्बे···झाम्बे···तू खतम हो रहा है।···देख···देख चौधरी और पंडत ने पीर जी की कसम पै भी यकीन नी करा, पर तेरे कूँ तो है उस पै भरोसा?···उसे लगा कि वह उस पीर बाबा पर पूरा भरोसा करता है। अब तक अविश्वास का छेद था जिसमें से वह टपक रहा था। अब नहीं चुएगा।···उसने कसम खायी कि वह जिन्दा रहेगा···इस छेद से टपक-टपक कर खतम नहीं होगा। घड़ी-घड़ी नहीं मरेगा। लाओ पुलिस को। मारो उसे। एक बार यही सही।
उसकी औरत चूल्हे पर रोटियां सेंकने में लगी थी।शाम घिर आयी थी।

उसने देखा,पतली-पतली सूखी लकड़ियाँ धीरे-धीरे जल रही थीं। धुआं उठ रहा था···वह उठ खड़ा हुआ। आग से निकलते धुएं की तरह फैलता हुआ, रोटियों की तरह गरम तवे पर सिंकता हुआ और सूखी लकड़ियों की तरह धीरे-धीरे चटर-पटर जलता हुआ।
पत्नी ने टोका-"कहां जारे? रोट्टी खाते जाओ।"

"तू सेंक। इब आया। जरा चौधरी कूँ यो सगझा आऊँ कि झाम्बा मरग्या था, अकै फेर जनम ले लिया उसनै।"

कहता हुआ झाम्बा तेजी से चल पड़ा।

भीतर से झाम्बा सचमुच सूखी लकड़ियों सा जलता हुआ चटर-पटर हो रहा था। एक औरत की मर्दानगी का आवेश उसे भीतर तक झिंझोड़ गया था।

अंधेरा हो चला था और रास्ता कीचड़-पानी से लथ-पथ था। किन्तु वह सुलगता हुआ, बड़बड़ाता हुआ इस तरह सीधे ही चला जा रहा था, मानो बिना इस कीचड़ में सने रास्ता पार कर जाने की कोई सिद्धि उसे प्राप्त हो। हालांकि, वह बच कर भी निकल सकता था, पर जानबूझ कर वह सीधे चला जा रहा था।···उसे कोई नहीं रोक सकता था···न कीचड़, न पानी···न पुलिस न चौधरी···पर,

अचानक मानो सुक्खू लँगड़े ने रोक लिया।

सुक्खू के झोंपड़े के नज़दीक से गुजरते हुए उसकी तेज चाल में अचानक झटका लग गया। और बजाए आगे बढ़ने वह वहीं खड़ा-खड़ा सुक्खू लंगड़े की घटना से आतंकित हो उठा।

वह फिर अपने भीतर से स्वयं को पुकारने लगा झाम्बे···ओ झाम्बे।···सुक्खू नै पुलिस तै क्या पाया? लंगड़ापन। उसे याद आया- कई बरस पहले जब "परधान" के घर छापा पड़ा था, तो सुक्खू ने पुलिस को वह ठिकाना बता दिया था जहां"परधान" चोरी-छुपे देशी दारू खींचने का धंधा करता था। सुक्खू हालांकि जानता था कि वह ऐसा करके "परधान" से दुश्मनी मोल ले रहा था, किन्तु "परधान" ने एक बार उससे अपने खेतों पर काम कराके पचास रूपये की दिहाड़ी मार ली थी।···सुक्खू ने इसका बदला ले लिया था।···लेकिन अगले रोज़ क्या हुआ था?

याद करके झाम्बा भयभीत हो गया। अगले दिन पुलिस आई और बिना कुछ कहे-सुने सुक्खू को निर्दोष ही पकड़ ले गयी। अगले रोज जब सुक्खू गांव लौटा तो उसकी हड्डी-पसली बराबर हुई पड़ी थीं।···सुक्खू को रात भर थाने में रखकर घोटा गया और फिर···। झाम्बा सिहर उठा।

झाम्बा का रोम-रोम कांप गया। महसूस होने लगा कि सुक्खू को जो मार पुलिस की पड़ी थी, उसका दर्द उसके भीतर अब फिर उठने लगा है···सुक्खू महिनों खाट पर पड़ा सड़ता रहा था। पर मौत नहीं आयी।···लुगाई भी उसे छोड़ कर भाग ली थी।···औरत जात।···क्या पता, किसके घर जा बैठी। सुक्खू के भाग में रह गयी लंगड़ी जिन्दगी। ···आज बेचारा 'गोर्डो' के बल मुड़े-मुड़े पैरों से बैठा-बैठा ही सरकता है और तेरे-मेरे से मांग-तांग कर गुज़ारा करता है।

झाम्बा एक-एक कर सोचने लगा-झाम्बा। झाम्बा। सम्हल जा बावले। औरत जात के कहने में आ गया तू? मार खावैगा तू पुलिस की। तेरे कूं ना छोडैगी जीन जोग्गा ना मरन जोग्गा।···क्या धरा लुगाई जात का-तेरी घरवाली जा बट्ठैगी किसी और के घर। तू सड़िये फेर सारी उमर पड़ा-पड़ा। सुक्कू बैट्ठा-बैट्ठा चल-फिर भी लै, जाने तेरी क्या गत बनै।

झाम्बा वापस पलट गया।

किन्तु अपने घर के निकट पहुंचते-पहुंचते घरवाली के शब्द फिर से उसे तितर-बितर करने लगे।···झट्टे इल्जाम अर जुलुम सह-सह के जिन्दगी बसर करने तै चोक्खा तो या ढेर अच्छा है कि इस पुलिस की मार सह-सह कै मर जा।···इस ससुरी लुगाई जात का क्या बिगड़ै··· जवान चलाने कूं चह जित्ती चलवा लो···कल कूं तेरी हाड़- पसली एक कर दी तो?···यो लुगाई तो छोड़-छाड़ कै चल दै-क्या भरोसा।···इन चौधरी लोगों की रैयत में रैते-रैते पुश्तें गुजर गयी तेरी···झाम्बे, ओ झांबे।···इब बिचारे चौधरी कूं किसी नै बहका दिया, नहीं तो कौन उसका दिमाग चलग्या कि मेरे पिच्छै रड़ता?

खुद को तैयार करने के लिए झाम्बा ने पास की एक नाली में थूका और अस्त-व्यस्त कदमों से चल दिया-दो रोट्टी खाकै जिन्दगी बसर करनी झाम्बे ··अर आद्धी जिन्दगी गुजर गी,आद्धी और गुजर जागी इक्कर ही।···लुगाई की अक्कल पै चल दिया तू···कोई मर्द लुगाई की अक्कल के-फेर में पड़ कै हुवा क्या सुफल?

झाम्बा में उत्साह दौड़ गया।

उसने तय कर लिया कि घर में घूसते ही वह रोटी माँगेगा···रोब के साथ।···लुगाई ज्यादा ची-चपट करेगी तो एक रैपट मार देगा।

किन्तु घर में घुसते ही उसका सारा उत्साह भाप बन गया। खाने का उसका मन ही नहीं हुआ। वह समझ नहीं पा रहा था कि यहां आते ही उसे क्या हो गया है।

वह चुपचाप शीशम के नीचे बिछे एक खटौले पर जा पसरा। अन्धेरा होने के कारण उसकी पत्नी उसे देख नहीं पायी। पर उसे साफ दीख रहा था कि घर के अंदर उसकी घर वाली चूल्हे की राख एक टीन के पत्तर में निकाल रही थी।

राख बाहर कूड़े पर डालने जब वह आयी तो झाम्बा को चुपचाप पड़ा देख उसे आश्चर्य हुआ।

राख झाड़ते हुए बोली-"चौधरी कै हो आया?"

"तैरे कूँ क्या।" झाम्बा ने रौब और गुस्से से कहना चाहा। लेकिन उसके स्वर में केवल दयनीयता ही उभर सकी।

उसकी पत्नी ने जैसे उसकी यह कमजोरी पकड़ ली हो, बोली-"अपना मुं करेक-सा}जरा सा} काहे कूँ बना रक्खा हैगा? ···फेर कोई बात हुई क्या?"

"तू जा···म्हारा जी ठीक नीं हैगा।" झाम्बा झुंझलाहट भरे स्वर में बोला।

"जी ठीक नीं ? जी कूँ क्या हुआ? इबी ता चोक्खा था।···रोट्टी खा कै पड़िये। पो के रख दी मन्नै।" उसने जरा सख्ती से कहा।

झाम्बा चुप पड़ा रहा।

औरत के आगे न जाने क्यों वह स्वयं को कमजोर महसूस कर रहा था।···कभी वह सोचता-इसी वक्त उठे और जा कर चौधरी का गला दबा दे।··· पर इससे क्या ···गला तो उसका दबाना चाहिए जिसने उसका झूठा नाम लगाया है।···कभी वह सोचताऔरत के आगे यूँ कमजोर पड़ने से बेहतर तो पुलिस के डंडे सहना है।···न सही,पर सुक्खू की तरह अपाहिज जिन्दगी अगर उसे मिली तों जहर खा कर अपने को खत्म कर लेगा···सुक्खू की तरह नहीं रहना जिनदा। देख लेगा पुलिस को भी।

देर तक चुप देख उसकी पत्नी को शक हुआ कहीं बुखार-सुखार न चढ़ गया हो। उसे चिन्ता हुई-कहीं पड़ गया तो दवादारू की भी मुश्किल पड़ जाएगी। उसने झाम्बे का माथा छुआ। ठीक था।

फिर नाड़ी देखने के लिए हाथ देखा। पर झाम्बा ने बुरी तरह उसका हाथ झटक दिया।

अपमान महसूस करते हुए वह एक ओर खड़ी हो गयी।

कुछ देर दोनों तरफ मौन छाया रहा।

सहसा झाम्बा फट पड़ा-"उपदेस देने कूँ···अर मार खाने कूँ हम।···तू चाहवे हैगी कि सुक्खू की तरे पुलिस सै पिटछित्त कै मै बीरान हो लूँ···टाँगाँ तुड़ा लूँ···अर तू कहीं जा कै किसी अपने यार के बैठ जा···"

वह हाँफ रहा था···चिल्ला रहा था।

उसकी पत्नी भीतर तक सुलग उठी। इस अपमान से तिलमिला कर वह उत्तेजित स्वर में बोली-"कतई भुक्खा सेर हो रा···टिक्कड़ खा लै, फिर सोचियै जरा ठंडे दिमाक तै।···इत्ता ही सेर है, तो उस चोधरी के अर पुलीस के आग्गै दहाड़िये।"

झाम्बा जोरों से जैसे घूमने लगा।

अचानक वह बिजली की फुर्ती से उठा और अपनी घर वाली पर तड़ातड़ प्रहार करने लगा।··· वह तब तक चुपचाप मार खाती रही, जब तक कि झाम्बा स्वयं थक कर ढह नहीं गया।

एक अजीबो गरीब वनस्पति

रमेशदत्त शर्मा

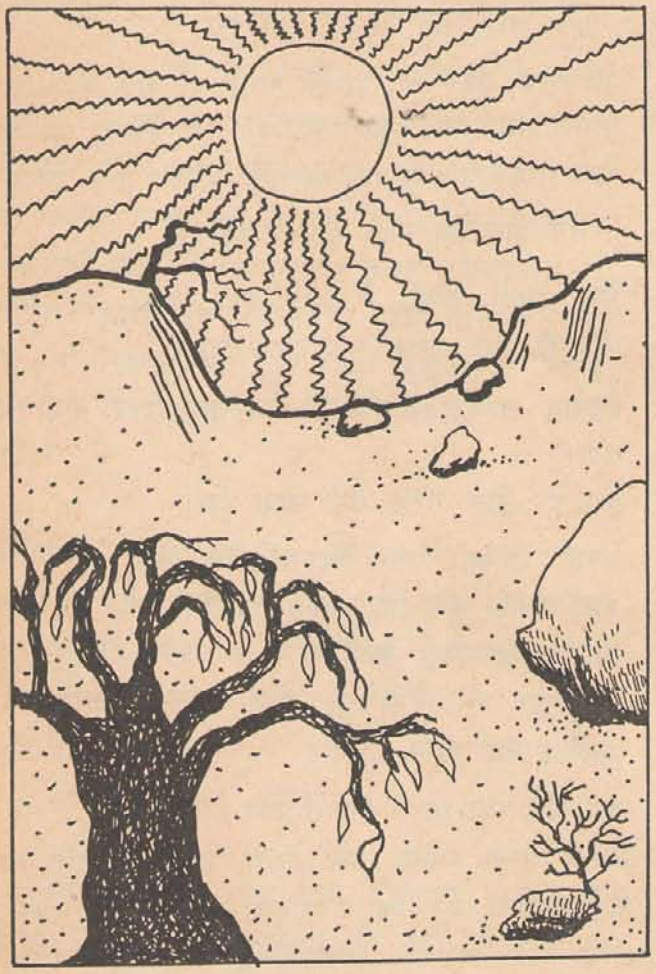

जेठ के दिन । गर्मागर्म लू के थपेड़ों का मौसम। दूर-दूर तक पड़ी हुई नंगी चट्टानें, दहकते हुए लाल बदन को उघाड़े पड़ी हैं । मन एक वितृष्णा से भर जाता है । आवरण विहीन प्रकृति कितनी वीभत्स हो उठती है । और फिर ऋतुएं करवट बदलती हैं । वर्षा की प्रथम बूंद जैसे ही धरा को छूती है (छूती क्या है मरणासन्न चट्टानों में चेतना फूंक देती है) देखते ही देखते पूरा का पूरा दृश्य हरे-भरे नज़ारे में बदल जाता है ।कुछ देर पहले की अनावृत चट्टानोंके तन पर के हरे, नारंगी, पीले दुपट्टे मन पर छा-छा जाते हैं । चट्टानों के ये रंग-बिरंगे वस्त्र वस्तुतःविश्व की एक विचित्रतम वनस्पति से बने होते हैं, जो एक दूसरे पर निर्भरता का एक "न देखा न सुना" नमूना पेश करती है ।

इस वनस्पति को आप भली-भांति पहचानते हैं। देखिए "ना" न करिए । उस दिन संगम की सीढ़ियों पर आपकी मुलाकात नहीं हुई थी सिवार से, जब आप फिसलने-फसलने को हो गए थे और नहाने आए भक्तों की भीड़ हंस रही थी। और फफूंद से तो आप कई बार मिल चुके हैं। फफूंद जो अच्छे भले अचार को सड़ा डालते हैं और बासी रोटी, डबलरोटी पर प्रायः विराजमान पाए जाते हैं । हां, यह सही है कि आप इस जोड़े को अलग-अलग ही पहचानते हैं । परन्तु यहां चट्टानों पर तो ये एक साथ हैं । कुछ दिन पहले तक आप तो क्या भले-भले वनस्पतिज्ञ भी नहीं पहचानते थे और "एन्साइक्लोपीडिया ब्रिटेनिका" के नवें संस्करण में "लाइकेन" नामक इन पौधों के बारेमें लिखा गया था -"न तो इनमें सिवारें (एल्गी) होती हैं न कोई फफूंद (फंजाई) जबकि इन वनस्पतियों (लाइकेन) में सिवा सिवार और फफूंद के कुछ नहीं होता ।

"सिवार" शब्द "शैवाल" से बना है, और "फफूंद" के लिए हमारा प्राचीन नाम है "कवक" । अतः जिस तरह शैवाल और कवक के मिलने से प्रकृति

में इस वनस्पति का उद्‌भव हुआ है, वैसे ही शैवा [ल+कव] क, इन दो शब्दों को मिलाकर इसका भारतीय नामकरण किया गया है -शैवाक।

नमी की कमी न हो, प्रकाश हो और वायुमंडल से कार्बनडाईऑक्साइड मिलती रहे तो शैवाल भोजन बनाने में जुट जाते हैं । स्टार्च, शर्करा सब बना डालती हैं । कवक {फफूंद} सामग्री जुटाने का काम करते हैं परिवार की रक्षा करते हैं और संतानोत्पादन में जुटे रहते हैं । इन शैवालों के आधार पर ही इन वनस्पतियों को अलग-अलग रूप मिला है । पर्णिल शैवाक हैं पत्तियों सरीखे, क्षुपिल हैं झाड़ी नुमा और पर्पटिल शैवाक चट्टानों पर पपड़ी की तरह जमे रहते हैं ।ये सब शैल प्रेमी ही नहीं हैं, वृक्षों की

शलों पर भी खूब उगते हैं । ओक की छाल पर दाढ़ी की तरह लटकते शैवालों से वैज्ञानिकों ने जले पर लगाने के लिए मरहम बनाई है। ध्रुव प्रदेश की बर्फ में उगने वाले शैवाक वहां के रेंडियरों का प्रिय भोजन हैं । कई देशों में इन्हें आदमी भी खाते हैं ।

मगर इनका सबसे अधिक उपयोग कुछ विशेष रंग बनाने के लिए किया गया है । रासायनिक प्रयोगशालाओं में "क्षार" और "अम्ल" की पहचान के लिए काम आने वाला लिटमस पेपर भी "रोसेला"

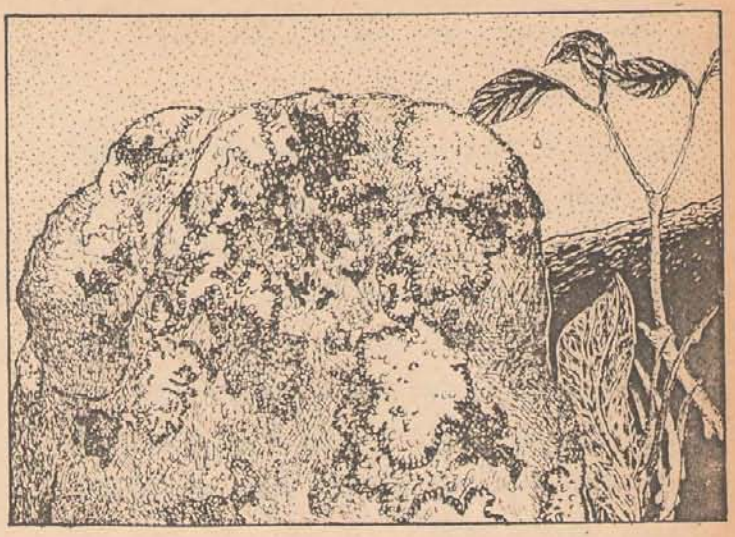

नामक शैवाक से प्राप्त वर्णक {डाई} से रंगा जाता है । फिनलैन्ड और चीन में कुछ शैवाक तपेदिक की दवा के काम आते हैं । मिश्र के पिरामिडों में भी शैवाकों की किस्में सुरक्षित मिली हैं, जो शायद औषधि के रूप में ही काम आती होंगी । आधुनिक वैज्ञानिकों ने भी दाद जैसे चर्मरोगों तथा कुछ जीवाणुजन्य रोगों, जैसे टी·वी., के इलाज के लिए शैवाकों से एंटीबायोटिक औषधियाँ बनाई हैं ।

संभवतः इतने विभिन्न उपयोगों के कारण ही, शैवाक रसायनज्ञों की प्रिय सामग्री बन गए हैं, तथा "लाइकेन-माइक्रोकेमिस्ट्री" नाम के एक नए विभाग का जन्म हुआ है । एक शैवाक में उपस्थित अम्लों की जांच से उस शैवाक की जाति का पता लगाया जा सकता है ।

प्रकृति में शैवाल और कवक एक दूसरे की विरोधी वनस्पतियां हैं । शैवाल अपने शरीर में मौजूद हरे रंगद्रव्य "क्लोरोफिल" की वजह से अपना भोजन आप बना लेती है, जबकि कवकों में क्लोरोफिल नहीं होता । अतः कवक परजीवी पौधों के रूप में दूसरे पौधों या जन्तुओं या आदमी से पोषण प्राप्त करते हैं और उनमें

बहुत से रोग पैदा कर देते हैं । "दाद" कवक के कारण ही होता है । कुछ कवक गोबर, चमड़ा, लकड़ी और सड़े-गले जैव पदार्थों पर भी रहते हैं ।

एक दूसरे के इतने विपरीत स्वभाव वाली वनस्पतियां क्यों मिलीं, और मिलीं भी तो ऐसी कि अपनी पृथक सत्ता ही खो बैठीं और वनस्पतियों के एक नए वर्ग को जन्म दे बैठीं, यह बात बहुत दिनों से उलझन बनी हुई है । जब तक सेक्शन काटकर सूक्ष्मदर्शी यंत्र में न देखें तब तक एक शैवाक के भीतर पड़े कवक के जालनुमा धागे और उनमें फंसी पड़ी हरी-हरी शैवाल की कोशिकाएं नज़र ही नहीं आतीं ।

जिस तरह हमने "फंसी पड़ी" कहा, वैसे ही कुछ वैज्ञानिकों का भी विचार था कि शैवाक के रूप में फफूंद ने जबर्दस्ती सिवार को फांस लिया है और वह उसका शोषण करता है । परन्तु यह बात होती तो सिवार बेचारी कब तक ज़िन्दा रहती ?जबकि असलियत यह है कि दोनों एक दूसरे को बिना कोई हानि पहुंचाए अपने-अपने कर्त्तव्य का पालन करते हैं । अतः अधिकांश वैज्ञानिक यह मानते हैं कि दलदल, बरफीले ध्रुव प्रदेश, पर्वतीय तथा समुद्रतलीय चट्टानों और वृक्षों की छालों जैसे असामान्य आवासस्थलों के कारण ही ये वनस्पतियां एक दूसरे के निकट आईं । जहां कोई और वनस्पति उग ही नहीं सकती वहां परजीवी या मृतजीवी कवक का गुज़ारा कैसे चलता, इसीलिए उसने शैवाल का सहारा लिया जो प्रकाश संश्लेषण द्वारा भोजन स्वयं बना लेती हैं । दूसरी ओर जल या अत्यन्त नम स्थानों की निवासिनी कोमल शैवालों को भी भयानक गर्मी या भयानक सर्दी के प्रभाव से सुरक्षित रहने तथा चट्टानों जैसी कठोर सतह पर पनपने के लिए कवक का हाथ थामना पड़ा। कोई साथी मिले तो हर मुसीबत आसान हो हो जाती है ।

एक अमेरिकी वनस्पतिज्ञ- "अहमेडजिअन"ने एक सिवार और एक फफूंद लिया और इन दोनों को मिलाकर प्रयोगशाला में शैवाक की सृष्टि करनी चाही । देखा यह गया है कि जब एक शैवाक का वनस्पति-जोड़ा अलग-अलग करके, उनको उगाने की कोशिश की जाती है तो वे उगते तो हैं मगर बे-मन मरे-मरे से ।

इसी प्रकार जब प्रकृति में स्वतंत्र रूप से उगने वाला कवक, एक स्वतंत्र शैवाल के सम्पर्क में कृत्रिम रूप से लाने की कोशिश की जाती है तो कवक {फफूंद} के डोरे शैवाल के चारों ओर ढीले-ढीले इकट्ठे हो जाते हैं और ऐसी कोई संरचना नहीं बनती जिसे शैवाक की संज्ञा दी जा सके । इस तरह के प्रयोगों में कृत्रिम रूप से एक दूसरे के गठबंधन में जकड़े गए कवक और शैवाल ऐसे अम्ल अवश्य बनाते हैं, जो केवल शैवाकों में ही बने हैं।

जड़-तना, फल-फूल विहीन ये वनस्पतियां बड़ी धीमी गति से बढ़ती हैं । 100 साल में इनका व्यास कुल दो सेन्टीमीटर बढ़ता है । प्रयोग शाला परीक्षणों में जहां इसके कारण बाधा पड़ती है वहां यही अवगुण उन वैज्ञानिकों के लिए बड़े काम का सिद्ध हुआ जो चट्टान पर उगे शैवाकों की सहायता से चट्टान की आयु मालूम कर लेते हैं । किन्तु इन वनस्पतियों में जो सबसे आकर्षक है, वह है इनका सहजीवन।

सवालीराम

० मुर्गी के दांत क्यों नहीं होते?

०० बड़े-बूढ़े अक्सर बच्चों को कहते रहते हैं कि मुंह ठीक से रोज साफ करो, ज़्यादा मीठा न खाओ, दांतों को लकड़ी से मत कुरेदो,भोजन चबा-चबाकर खाओ, और भी न जाने क्या-क्या। दांतों को लेकर ये नसीहतें दांतों के हमारे जीवन में महत्व को बताती हैं ।

{वैसे दांतों को लेकर प्रचलित मुहावरे भी तुमको याद आ रहे होंगे । दांत किट-किटाना, दांत खट्टे कर देना, लोहे के चने चबाना, हाथी के दांत दिखाने के और खाने के और, वगैरह-वगैरह} ।

हर जीव के शरीर के अंग उसके रहने के वातावरण और उस वातावरण में उसकी आश्यकता के हिसाब से विकसित हुए हैं । जैसे हमारे मुंह के दांत भोजन को पीसते हैं, गाय-भैंसके दांत भी भोजन को पीसने का काम करते हैं {तुमने देखा होगा कि फुरसत में गाय-भैंस जुगाली करती बैठी रहती हैं ।}

सांप के दांत शिकार को पकड़े रखने और दांतों के माध्यम से उनके शरीर में विष का प्रवेश कराने में मदद करते हैं ताकि शिकार बेहोश हो जाये ।

अब आते हैं पक्षियों के सवाल पर । पक्षियों का जीवन तो खुले आसमान में मनचाही उड़ानें भरते रहने में बीतता है । हवा में उड़ने वाले पक्षियों का शरीर हल्का होता है। यही हल्कापन उन्हें उड़ाने में मददगार होता है । पक्षियों की हड्डियां हमारी तरह भारी नहीं होतीं, वे छोटी-छोटी और अन्दर से खोखली होती हैं जिससे उनका भार काफी कम हो जाता है, उनके पंख भी काफी हल्के होते हैं । अब यदि हम पक्षियों के शरीर में हमारी तरह के दांतों के होने के बारे में सोचें तो साफ है कि ऐसे दांत पक्षियों के शरीर का भार बढ़ायेंगे जिससे उन्हें उड़ने में मुश्किल होगी । तो पक्षियों के मुंह का छेद, अपने वातावरण और जरूरत के हिसाब से, खुरदरी, मजबूत और कड़क पदार्थ से बनी चोंच से घिरा रहता है । ये चोंच भोजन को छोटे-छोटे टुकड़ों में तोड़ती है, टुकड़ों-टुकड़ों में बंटा हुआ भोजन गले के निचले हिस्से में मौजूद एक फूली हुई थैली {जिसे क्राप भी कहते हैं} में पहुंच कर इकट्ठा हो जाता है, यहां यह भोजन पानी के साथ मिलकर और नरम होता है ताकि आसानी से आमाशय में पीसकर इसे पचाया जा सके ।

तुमने मुर्गे-मुर्गियों को छोटे-छोटे कंकड़ -पत्थर भी चोंच से उठाते हुए देखा होगा । दरअसल कंकड़-पत्थर ये खाने के लिए नहीं बल्कि भोजन को पीसने के लिए खाते हैं । ये कंकड़पत्थर आमाशय में भोजन को पीसने का काम करते हैं । यानी पीसने का जो काम हमारे दांत करते हैं उनकी कमी ये कंकड़-पत्थर मुर्गी के शरीर में पूरी करते हैं ।

० ठंड में दांत क्यों किटकिटाते हैं?

०० इस सवाल का उत्तर समझने के पहले हमें दांतों की बनावट व उनका हमारे महसूस करने की क्रिया से संबंध समझना होगा ।

सभी दांतों की रचना लगभग एक सी होती है लेकिन सभी दांतों के काम एक से नहीं होते ।

दांत मसूड़ों पर जबड़े की हड्डियों में काफी गहराई पर स्थित होते हैं । दांत की रचना को तीन हिस्सों में बांटकर समझ सकते हैं।

एक तो दांत का आधार भाग {जड़} जो जबड़े की हड्डी के भीतर मौजूद रहता है । दूसरा जड़ के ऊपर का भाग जो मसूड़े के भीतर होता है । तीसरा मसूड़े से बाहर निकला चमकीला भाग । यह भाग एक प्रकार के पदार्थ {एनेमल} की परत चढ़ी होने के कारण सफेद और चमकीला दिखाई देता है ।

दांतों के ऊपर तीन तरह की परतें {सतहें} हुआ करती हैं । सबसे ऊपरी परत एनेमल से बनी होती है जिससे यह काफी सख्त और चमकदार होती है ।

इससे नीचे की सतह एक प्रकार के पदार्थ {डेन्टाइन}की बनी होती है, जिसके बढ़ने से दांत भी बढ़ते हैं ।

और सबसे अन्दर का हिस्सा खोखला होता है जिसमें खून लाने-ले जाने वाली नलियां और संवेदना तंतु {तंत्रिका तंतु} होते हैं खून की नलियों और तंत्रिका तंतुओं का संबंध दांतों की जड़ों के माध्यम से हमारे शरीर से होता है ।दांतों को स्वस्थ बनाये रखने का काम इन्हीं खून की नलियों का होता

अब आते हैं अपने सवाल पर । जब हमें ठंड लगती है तो हमारा शरीर इस ठंड के खिलाफ लड़ने के लिए खुद ऐसी कोशिश करता है ताकि शरीर की गर्मी बनी रहे या अतिरिक्त गर्मी पैदा की जा सके ।

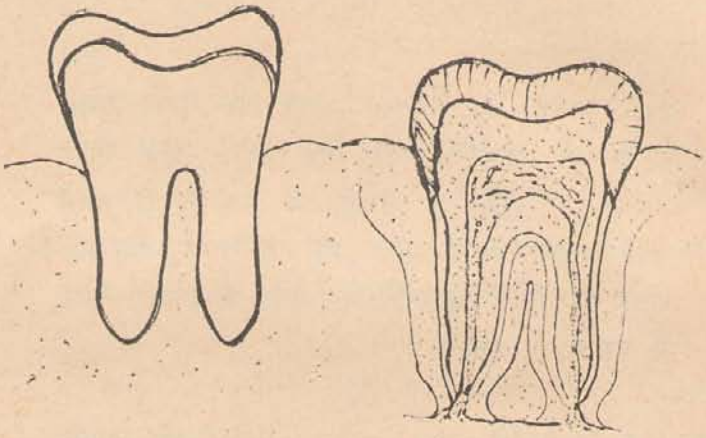

मांस-पेशियों के बहुत जल्दी-जल्दी सिकुड़ने और फैलने के कारण होती क्रिया को हम कंपकंपी कहते हैं । यह गति मांस-पेशियां अपने आप ही करती हैं । मांसपेशियों के इस तरह जल्दी-जल्दी सिकुड़ने और फैलने की क्रिया से शरीर में अतिरिक्त ऊर्जा पैदा होती है, ठंड से बचाव के लिए ।

तो भई, ठंड के दिनों में दांत का किट-किटाना ठंड से ही बचने का शरीर का एक तरीका है ये तो तुम समझ गये होगे ।

● इस साल होशंगाबाद विज्ञान शिक्षक उन्मुखीकरण शिविर के दौरान भोपाल में प्रशिक्षण के लिए आए हुए शिक्षकों/अनुवर्तनकर्त्ताओं,प्रमुख सचिव (शिक्षा) और शिक्षा विभाग के अन्य अधिकारियों की एक सामूहिक बैठक हुई थी। इस गोष्ठी का एजेन्डा तय करने के लिए शिक्षकों,अनुवर्तनकर्त्ताओं और स्रोत शिक्षकों की एक समिति बनाई गई थी। इस समिति ने उस बैठक में लिखित में एक प्रपत्र प्रस्तुत किया था जिसे यहां पर बिना काटछांट के छापा जा रहा है।

होशंगाबाद विज्ञान शिक्षक उन्मुखीकरण
शिविर,88

दिनांक-10-6-88

स्थान : क्षेत्रीय शिक्षा महाविद्यालय, भोपाल ।

प्रमुख सचिव, शिक्षा की अध्यक्षता में आयोजित सामूहिक बैठक में चर्चा हेतु प्रस्तुत मुद्दे जो शिविर में भाग ले रहे शिक्षक, अनुवर्तनकर्त्ता एवं स्रोत शिक्षकों के बीच चर्चा के द्वारा उठे हैं एवं उन सबकी ओर से प्रस्तुत किए जा रहे हैं :

निवेदन है कि इन मुद्दों पर कार्यवाही करके समुचित निर्णय से शिक्षकों को भी अवगत कराया जावे ।

(अ) आर्थिक मुद्दे :

जिनके विषय में शासन के स्पष्ट आदेश होने के बावजूद भी पालन नहीं किया जाता।

1· यात्रा देयकों का भुगतान न होना :
विकास खंड तिरला, जिला धार(आ0जा0क0विभाग) के अन्तर्गत प्रशिक्षण में आये शिक्षकों को सन्।985,86, 87 के यात्रा देयकों का भुगतान आज तक नहीं किया गया है।

2· कुछ संस्थाओं में यात्रा अग्रिम बंटन के उपयोग में पक्षपात पूर्ण व्यवहार किया जाता है । जैसे हरसूद,पू0निमाड़,खंडवा, शा0उ0मा0वि0 मेघनगर, झाबुआ, विकास खंड शिक्षा अधिकारी,होशंगाबाद, आ0जा0क0झाबुआ में सन् 86-87 में ऐसा हुआ। (होशंगाबाद विकास खंड में मार्च,88 में)

3· वर्तमान प्रशिक्षण हेतु यात्रा अग्रिम नहीं दिया गया।शा0उ0मा0वि0 तिरला,विकास खंड, तिरला (आ0जा0क0विभाग) जिला धार,शा0उ0मा0 मेघनगर (झाबुआ), शा0मा0वि0 शोभापुर,विकास खंड शिक्षा-अधिकारी सोहागपुर। एवं पूर्व निमाड़,खंडवा। खरगोन ।

4· यात्रा अग्रिम पर्याप्त न देकर कम देना जैसे होशंगाबाद संभाग में प्रत्येक उ0मा0 शाला को बंटन मात्र 800/-रूपए दिया गया जबकि विभिन्न प्रशिक्षणों में भाग लेने वाले शिक्षकों के अनुपात में राशि बहुत कम थी।

5· अशासकीय एवं निजी संस्थाओं के शिक्षकों के यात्रा भत्ता हेतु किसी भी ठोस नियम का पालन नहीं किया जाता। इटारसी युगान्तर शाला, अशासकीय (आ0जा0क0)की शिक्षिकाओं को पिछले वर्ष एवं इस वर्ष यात्रा भत्ता नहीं दिया गया। कान्वेंट एवं टैगोर शाला, इटारसी में लगभग 100/- रूपए दिए गए हैं। अनेक शिक्षक स्वयं के व्यय से प्रशिक्षण प्राप्त करते हैं।

(ब) आर्थिक मुद्दे जिन पर नियम नहीं हैं किन्तु नियम बनकर लागू होना चाहिए :

1. होशंगाबाद विज्ञान प्रशिक्षण प्राप्त करने के बाद (कक्षा 8 वीं) प्रशिक्षित शिक्षकों को दो वेतन वृद्धियां दी जायें।

2. या 100/-रूपए प्रतिमाह विज्ञान उप वेतन के रूप में पारिश्रमिक दिया जाए।

3. लगातार उत्कृष्ठ परीक्षा फल होने पर प्रोत्साहन राशि दी जाए।

4. कार्यक्रम में जुड़े स्रोत शिक्षकों को प्रशिक्षण के बाद मानदेय प्राप्त हो।

5. नई शिक्षा नीति के समान ही शिविर में ही नगद भुगतान करके की व्यवस्था की जाए। (मंहगाई को देखतेहुए)।

6. सभी प्रशिक्षणार्थियों को समान दर पर यात्रा भत्ता अग्रिम भुगतान किया जावे।

7. अनुवर्तनकर्त्ताओं को जिन्हें यात्रा भत्ता की पात्रता नहीं है उन्हें 15/-रूपए प्रत्येक अनुवर्तन पर दिए जाएं।

8. प्रायोगिक एवं सैद्धांतिक परीक्षा मूल्यांकन की दर प्रति उत्तर पुस्तिका 1/- रूपया दी जावे।

9. प्रत्येक मा0शाला में एक प्रयोग शाला सहायक का पद निर्मित किया जाए।

10. प्रत्येक संगम केन्द्र को प्रतिवर्ष 500/- स्टेशनरी व्यय हेतु दिये जाएं।

(स) अनार्थिक मुद्दे जिनके नियम तो हैं किन्तु पालन नहीं हो रहा है:

1. प्रशिक्षित शिक्षकों को प्राथमिक शालाओं में या अन्य शालाओं में जहां होशंगाबाद विज्ञान नहीं पढ़ाया जाता है वहां पदोन्नत, स्थानांतरित, आसीजित न किया जाए। जो शिक्षक प्राथमिक विद्यालय में आसीजित/पदांकित हैं तथा प्रशिक्षित हैं उन्हें माध्यमिक विद्यालय में जहां होशंगाबाद विज्ञान कार्यक्रम चलता है पदांकित किया जाए। जैसे जिला इन्दौर ,तहसील सांवेर,नामली,जिला रतलाम, देवास, हाटीपिपल्या।

2. अनुवर्तनकर्त्ताओं की रिपोर्ट(प्रतिवेदन) पर तुरन्त कार्यवाही की जाए। इस हेतु प्राचार्य, संगम केन्द्र को भी निर्देशित किया जाए।

3. गतिविधि शुल्क(ए0एफ0) की 15 प्रतिशत राशि विज्ञान किट हेतु नियमानुसार खर्च की जा सकती है । किन्तु ऐसा न करने वाले से स्पष्टीकरण पूछा जाये।

4. होशंगाबाद जिले के शाला संकुलों में प्रदत्त सुविधाओं के समान सुविधाएं प्रदान करने हेतु नये शाला संकुलों में अलमारी और विज्ञान प्रभारी सहायक शिक्षक हेतु आदेश प्रसारित किए जाएं।

5. विज्ञान किट की आपूर्ति समयानुकूल की जाए।

6. अशासकीय शिक्षण संस्थाओं में किट सामग्री की व्यवस्था स्वयं करें इस हेतु कड़े निर्देश दिए जाएं।

7. जिन विद्यालयों में प्रशिक्षित शिक्षकों की कमी है वहां पूर्ति की जाए।

8· आदेश होने के बावजूद प्रशिक्षण में आदेश का पालन न कर अनुपस्थित रहने वालों पर कार्यवाही की जाए।

9· आदेश प्रसारित करने में जिन अधिकारियों/ कार्यालयों से देरी होती है या आदेश प्रसारित नहीं किए जाते हैं उनके विरूद्ध कार्यवाही की जाए।

10· अर्जित अवकाश :

अधिकारियों द्वारा सेवा पुस्तिका में अर्जित अवकाश चढ़ाया नहीं जाता और अगर कहीं चढ़ाया भी जाता है तो वह गलत होता है जैसे शिक्षकों को पहले 90 दिवस का अवकाश (तीनों अवकाश जोड़कर) वर्ष भर में मिलता था तो शिक्षक इस अवकाश में "क" दिवस कार्यरत रहता है तो अर्जित अवकाश की गणना निम्नानुसार की जाती है। चूंकि 90 दिवस पर 30 दिवस अर्जित अवकाश इसलिए "क" दिवस पर क×30/90 =क/3 दिवस।

यह गणना जब तक ठीक थी जबकि वर्ष भर का अवकाश 90 दिवस था। अब शिक्षकों को वर्ष भर में करीब 60 दिवस अवकाश मिलता है। इस कारण ऊपर की गणना द्वारा अर्जित अवकाश चढ़ाना गलत है। अवकाश नियम 1977 के पैरा 27 का अर्थ बाबू या अधिकारी गलत लगाकर सेवा पुस्तिका में क/3 दिवस के हिसाब से अर्जित अवकाश चढ़ाते हैं जबकि अब गणना निम्नानुसार होनी चाहिए चूंकि 60 दिवस पर अर्जित अवकाश 30 दिवस इसलिए क दिवस पर क×30/60 =क/2 दिवस। इस संबंध में अवकाश नियम 1977 के पैरा 27 का पूर्ण अवलोकन करके स्पष्टीकरण उदाहरण के साथ अधिकारियों को दिया जाए जिससे शिक्षकों के खाते में सही-सही अवकाश चढ़ाया जाए।

(द) <u>अनार्थिक मुद्दे जो नियम तो नहीं हैं किन्तु उन पर नियम होना चाहिए।</u>

1· शासन की मंशा है कि प्रत्येक माध्यमिक शाला में एक विज्ञान शिक्षक (उ0श्रे0शि0) पदांकित किया जाना है। इस पदांकन में नवीन विज्ञान स्नातक शिक्षक भी इस कार्यक्रम के उद्देश्यों के अनुसार बिना प्रशिक्षण प्राप्त किए कार्य नहीं कर सकता। अतः जिन जिलों में यह कार्यक्रम चल रहा है वहां इस पद की नियुक्ति हेतु होशंगाबाद विज्ञान प्रशिक्षित शिक्षकों में से ही चयनित किया जावे।

इस पदांकन हेतु हमारा सुझाव है कि होशंगाबाद विज्ञान प्रशिक्षित शिक्षकों की एकपरीक्षा लेकर उसमें उत्तीर्ण शिक्षकों को विज्ञान स्नातक मानकर पदांकित किया जाए।

2· एकलव्य द्वारा आयोजित विभिन्न सेमीनारों जैसे पर्यावरण,खगोल विज्ञान विषयक आदि में भाग लेने वाले ऐसे सभी शिक्षकों को जो स्वयं के खर्चे पर आते हैं उन्हें संस्था से विशेष आकस्मिक अवकाश स्वीकृत कर प्रोत्साहित किया जाए।

3· होशंगाबाद विज्ञान प्रशिक्षित शिक्षकों को प्रोत्साहन स्वरूप एक प्रमाण पत्रप्रदान किया जाए (1984 में उज्जैन में दिया गया था)।

4· विज्ञान शिक्षक चयन समिति श्रेष्ठ विज्ञान शिक्षक का चयन केवल उ0मा0वि0 से करती है। इस चयन प्रक्रिया में मा0शा0 के शिक्षकों को भी सम्मिलित किया जाए।

5· विभिन्न राष्ट्रीय एवं राज्य स्तरीय कार्यक्रमों में आंचलिक शिक्षकों को भाग लेने हेतु प्रोत्साहित किया जावे।

6· जिला स्रोत प्रशिक्षण संस्थान में होशंगाबाद-विज्ञान प्रशिक्षित शिक्षकों को प्राथमिकता के आधार पर चयन कर पदस्थ किया जाए।

7· जिन शालाओं के विज्ञान विषय का लगातार 3 वर्षों का परीक्षाफल श्रेष्ठ हो उन विद्यालयों के शिक्षकों को प्रोत्साहित किया जाए।

8· होशंगाबाद विज्ञान शिक्षण कार्य में संलग्न शिक्षकों को अध्यापन के अधिकतम 5 कालखंड दिए जायें। एवं अतिरिक्त प्रभार (छात्रवृत्ति वितरण, डाक व्यवस्था, वेतन केन्द्र, पुस्तकालय) से उन्हें मुक्त रखा जाए।

9· शिक्षकों को कार्यक्रम के मूल्यांकन एवं सर्वेक्षण का कार्य करने के लिए प्रोत्साहित करने हेतु आर्थिक एवं प्रशासनिक सुविधाएं उपलब्ध कराई जाएं।

10· संगम केन्द्र पर पुस्तकालय तथा माध्यमिक शालाओं में संदर्भ पुस्तकें उपलब्ध कराई जायें।

11· आ0जा0क0 विभाग में शिक्षकों के अधिकारों का वरिष्ठ अधिकारियों द्वारा हननः राज्य शासन ने नई शिक्षा नीति के तहत प्रत्येक ब्लाक में विकास खंड शिक्षा अधिकारी के पद निर्मित किए हैं। इस पद पर वरिष्ठता के आधार पर योग्य एवं प्रशिक्षित शिक्षकों को,व्याख्याताओं की पदोन्नति की जाकर अथवा प्राचार्यों की नियुक्ति की जाने की शासन की मंशा है। जिससे शिक्षा में गुणात्मक सुधार हो।

शिक्षा विभाग में विकास खंड अधिकारी के पदों पर प्राचार्यों को पदस्थ किया गया है किन्तु आ0जा0क0 विभाग में विकास खंड शिक्षा अधिकारी के पद पर 25 प्रतिशत पद विकास खंड अधिकारियों द्वारा (जो कि शिक्षा जगत की जानकारियों से अनभिज्ञ हैं) भरे जाने की प्रक्रिया अपनाई गई है एवं निकट भविष्य में तत्संबंधी आदेश प्रसारित होने की संभावना है इस प्रकार शिक्षक वर्ग के अधिकारों का हनन हो रहा है।

आ0जा0क0वि0 में 975 व्याख्याता के पद सीधी भर्ती द्वारा भरे गए हैं। शासन के स्पष्ट आदेश हैं कि 50 प्रतिशत पद पदोन्नत द्वारा भरे जावें। किन्तु विभाग के अधिकारियों द्वारा इन नियमों का पालन न करते हुए पदोन्नति की प्रक्रिया में अनावश्यक विलम्ब किया जा रहा है जिससे शिक्षकों में असंतोष व्याप्त है। समय रहते हुए असंतोष दूर किया जाए।

प्रति :

1· प्रमुख सचिव, शिक्षा, म0प्र0 शासन भोपाल।
2· आयुक्त लोक शिक्षण, म0प्र0 भोपाल।
3· आयुक्त, आदिवासी विकास कल्याण विभाग, म0प्र0 भोपाल।
4· संचालक, राज्य शैक्षिक अनुसंधान एवं प्रशिक्षण परिषद, म0प्र0 भोपाल।
5· एकलव्य संस्था, भोपाल।

कार्यक्रम को और कारगर बनाने हेतु सुझाव एवं मांग प्रस्तुत हैं ।

रूपकंवर।

उठ
जरा अपनी मन की आँखों पर
न्याय का
चश्मा लगा कर
इंसानियत के
आईने में
अपना चेहरा देख।
तुझे वहां सिर्फ
कालिख दिखाई देगी
जो
रूपकंवर की चिता से
उड़-उड़ कर जमी है

वाह रे समाज!
तू सती रूपकंवर का
पुजारी है ?
रूपकंवर ने
तेरे दोनों गालों पर
कस कर चाँटे मारे हैं
और तू उसकी
पांचों अंगुलियों के निशान
गालों पर बैठा सजाये है।

अरे, रूपकंवर महासती नहीं
बल्कि
तेरे घोर विधवा अन्याय से
बची है।
यदि वह
जलती नहीं तो क्या
तू उसे इंसान समझता ?

उसने
तेरी निर्मम
तिरस्कार रूपी ज्वाला में
अपने सपनों को
जलाने के बजाये
अग्नि में शरीर जलाया
और तू
उसकी चिता पर
फूल, आरती सजाये
स्वयं के मुख पर
राख पोत रहा है।

रूपकंवर देख रही है
और रो रही है
सोचा था उसने कि
शायद मेरे मरने पर
21 वीं सदी के इंसान को
कुछ चेतना आयेगी।

अरे! तू सत् का पुजारी है
हाय री किस्मत!
तू यह क्यों नहीं समझता
वह महासती नहीं
तेरे अन्याय की
मारी है।

- वन्दना पालीवाल,
हरदा

हमारे मौलिक अधिकार

वर्षों के मानव संघर्ष के बाद, हमें कुछ मौलिक अधिकार मिले हैं । ये अधिकार एक सम्मान भरे जीवन के लिए पर्याप्त तो नहीं हैं पर फिर भी महत्वपूर्ण हैं । हर व्यक्ति को इन अधिकारों की जानकारी होना जरूरी है ।

इसी वजह से, आमतौर पर कक्षा 7 वीं और 8 वीं की सामाजिक अध्ययन पाठ्य पुस्तक में मौलिक अधिकार पर एक अध्याय होता है । पर फिर भी हज़ारों लोगों के मौलिक अधिकारों का हनन होता रहता है और पढ़ेलिखे लोग (जिन्हें मौलिक अधिकार की जानकारी मात्र है) चुप रहते हैं । सवाल उठता है क्यों ?

शायद इसलिए कि पाठ्य पुस्तकों में जानकारी मात्र है । उन्हें पढ़ कर यह नहीं समझ में आता है कि इन अधिकारों का हनन कब और किस तरह से किया जाता है ! मौलिक अधिकार का हनन होने से नागरिक क्या कर सकते हैं ? किस के विरुद्ध कार्यवाही की जानी चाहिए ? इन प्रश्नों के उत्तरों के परिपेक्ष्य में ही मौलिक अधिकारों का वास्तविक स्वरूप समझ में आ सकता है ।

कक्षा 7 वीं की छात्राओं और छात्रों के लिए लिखी गई प्रयोगात्मक सामाजिक अध्ययन पुस्तक का एक अध्याय मौलिक अधिकारों पर है । इस अध्याय में निम्नलिखित बातों को स्पष्ट करने की कोशिश की गई है ।

- मौलिक अधिकारों की रक्षा करना सरकार का दायित्व है । इसलिए इन अधिकारों का हनन होने पर सरकार के विरुद्ध मुकदमा किया जा सकता है ।

- ऐसा मुकदमा (जिसे लोकहित का मुकदमा कहते हैं) सीधे उच्च न्यायालय या सर्वोच्च न्यायालय में किया जा सकता है ।

- लोकहितके मुकदमें कोई भी नागरिक (चाहे वह भुक्त भोगी का संबंधी हो या नहीं) भुक्त-भोगी की ओर से मुकदमा कर सकता है ।

- ये मुकदमें कई सारे (सैकड़ों या हजारों) भुक्तभोगियों की ओर से एक बार में ही किए जा सकते हैं ।

इस अध्याय के बीच-बीच में बच्चों से ही कई सवाल किए गए हैं ताकि वे मौलिक अधिकारों और उनके हनन को ठीक तरह से पहचान सकें ।

हम यह अध्याय छाप रहे हैं । क्या यह 7वीं के बच्चों के स्तर का है ? क्या ऊपर दी गई बातें इस में उभर कर आती हैं ? क्या इस अध्याय में जो सवाल किए गए हैं, उनसे मौलिक अधिकारों की समझ बनने में मदद मिलती है ? इस संदर्भ में आप की टिप्पणियां व सुझाव आमंत्रित हैं।

यहां यह स्पष्ट कर देना उपयुक्त होगा कि इस अध्याय से पहले बच्चे सरकार व न्यायपालिका (जिला कचहरी से सर्वोच्च न्यायालय, फौजदारी व दीवानी मुकदमें आदि) के बारे में पढ़ चुके हैं ।

भारत की केन्द्र सरकार, राज्य सरकार और न्यायालयों के बारे में तो तुम पढ़ ही चुके हो। पर संविधान में जो हमारे अधिकार दिए गए हैं, उनके बारे में तो हम ने अभी तक नहीं पढ़ा। ये अधिकार काफी महत्वपूर्ण हैं। हर एक भारतीय व्यक्ति को ये अधिकार हैं। संविधान के तीसरे भाग में जो अधिकार दिए गए हैं उन्हें 'नागरिकों के मौलिक अधिकार' कहा जाता है। यदि किसी व्यक्ति को इन में से कोई अधिकार नहीं दिया जाता तो वह सीधे सर्वोच्च न्यायालय में मुकदमा कर सकता है। सरकार का यह काम है कि वह हर भारतीय नागरिक के मौलिक अधिकारों की रक्षा करे।

भारत के नागरिकों के मौलिक अधिकार क्या हैं?

1. जीवन और निजी स्वतंत्रता का अधिकार-

भारत में रह रहे सभी लोगों को जीने का अधिकार है। यानी कोई भी उनकी जान नहीं ले सकता। लोगों के जीवन की रक्षा करना सरकार का कर्त्तव्य है।

भारत के हर नागरिक को अपनी स्वतंत्रता का अधिकार भी है। यदि किसी व्यक्ति को उसकी इच्छा के खिलाफ कहीं ले जाया जाए, या किसी को कहीं जाने से रोका जाए, तो हम कहते हैं कि उसकी निजी स्वतंत्रता का अधिकार छीना जा रहा है।

और यदि पुलिस ऐसे व्यक्ति की रक्षा न करे तो सरकार पर मुकदमा किया जा सकता है। यह मुकदमा वह व्यक्ति स्वयं भी कर सकता है या उसकी तरफ से कोई और भी कर सकता है।

हां, जब कोई व्यक्ति कोई कानून तोड़ता है या अपराध करता है तो उसे पुलिस पकड़ सकती है। पर जब तक वह जुर्म साबित नहीं हो जाता, तबतक उसे जेल की सज़ा नहीं दी जा सकती।

गिरफ्तारी के समय अपने जुर्म की जानकारी लेना और गिरफ्तारी के 24 घन्टे के अन्दर मजिस्ट्रेट के सामने पेश किए जाना भी हमारा एक मौलिक अधिकार है।

जीवन और निजी स्वतंत्रता का अधिकार छीना जाए तो क्या किया जा सकता है, इसका एक उदाहरण पढ़ो।

एक व्यक्ति,भोमा चरन ओराओं,को कुन्ती (बिहार में है) के मजिस्ट्रेट ने रांची के पागलखाने भेज दिया। भोमा चरन ओराओं पर मुकदमा चल रहा था। पागलखाने के सुपरिंटेण्डेंट ने 6 महीने बाद ही मजिस्ट्रेट को बताया कि भोमा बिलकुल ठीक है और पागलखाने से जा सकता है। लेकिन मजिस्ट्रेट ने इस बारे में कोई कदम नहीं उठाया। भोमा 6 साल तक पागलखाने में पड़ा रहा।

इस मामले में सर्वोच्च न्यायालय में भोमा की ओर से मुकदमा किया गया। यह साबित हुआ कि भोमा का जीवन और निजी स्वतंत्रता का अधिकार छीना गया था।

न्यायाधीश ने बिहार सरकार को आदेश दिया कि वे मुआवज़े के रूप में भोमा को 15000 रु. दें। साथ में उन्होंने यह भी कहा कि- "भोमा को कितना भी मुआवज़ा दिया जाए, उस मुआवज़े से उसके उन 6 वर्षों का जीवन नहीं लौट सकता जो भोमा ने 'जीवित मौत' की हालत में बिताए हैं।" लेकिन जीवन और निजी स्वतंत्रता के अधिकार का उल्लंघन हो तो मुआवज़ा ही दिया जा सकता है कोई दण्ड नहीं।

यह समझाने के लिए अपने शब्दों में दो वाक्य बनाओ कि भोमा चरण ओराओं के मौलिक अधिकार का कैसे हनन हुआ था।

ऐसा एक और उदाहरण लिखो जहाँ जीवन और निजी स्वतंत्रता के अधिकार का हनन हो रहा हो।

2. स्वतंत्रता के अन्य अधिकार।

जीने की स्वतंत्रता तो हम सब को है ही और अपनी इच्छा अनुसार रहने की भी। इसके अलावा–

अपनी इच्छा अनुसार रोज़गार करने की स्वतंत्रता।

भारत का कोई भी नागरिक अपनी इच्छा अनुसार काम (रोज़गार) कर सकता है। कोई उससे ज़बर्दस्ती ऐसा काम नहीं करवा सकता, जो वह करना नहीं चाहता है। मान लो कोई व्यक्ति आम बेचने का धंधा करना चाहता है तो कोई उसे रोक नहीं सकता। पर अगर वह किसी और से आम चोरी कर के बेचे तो उसे ज़रूर रोका जा सकता है, चूंकि वह किसी और की स्वतंत्रता छीन रहा है।

भारत में कहीं भी बसने की स्वतंत्रता

भारत के वासी भारत में कहीं भी जा कर रह सकते हैं, बस सकते हैं, रोज़गार कर सकते हैं।

हमारी एक मित्र सुकन्या की कहानी सुनो। सुकन्या का जन्म मद्रास शहर के करीब एक गांव में हुआ। दस वर्ष की उम्र में वह अपने माता-पिता के साथ पटना शहर में आ गयी। वहां से स्कूली पढ़ाई खत्म करके वह कलकत्ते में कालेज में पढ़ने गयी। फिर उसे वहीं नौकरी मिल गई और उसने वहीं शादी भी कर ली।

उसने और उसके पति ने मिल कर कलकत्ते में ही अपने लिए एक मकान बना लिया। कोई उसे नौकरी या मकान से यह कह कर नहीं निकाल सकता कि वह पटना (बिहार) से आई है या चूंकि मद्रास के पास उसका जन्म हुआ था।

भारत में कहीं भी आने जाने की स्वतंत्रता

हर भारतीय को यह अधिकार भी है कि वह भारत के किसी भी हिस्से में आज़ादी से आ जा सकता है। सुकन्या ही अब हर साल अपने पति के साथ कभी काश्मीर, तो कभी पचमढ़ी जैसी जगहों में घूमने जाती है। उसे कोई कहीं नहीं रोक सकता।

समिति बनाने का व सभा करने का अधिकार

देश के नागरिकों को समिति या यूनियन बनाकर अपने अधिकारों के लिए लड़ने की आज़ादी है। अधिकारों के लिए लड़ने के लिए

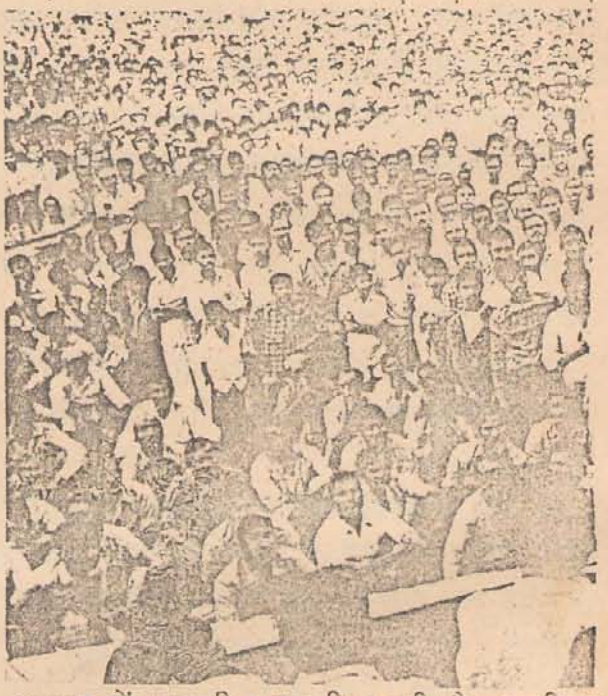

आपस में बातचीत करनी पड़ती है। इसलिए कहीं भी इकट्ठे होकर सभा बुलाने की स्वतंत्रता भी हमें है। हां, यह सच है कि आम तौर से, जिस भी स्थान पर हम सभा करें, वहाँ के प्रशासन को सूचित करना और कभी-कभी उनसे अनुमति लेना ज़रूरी होता है।

अपने मन की बात स्वतंत्र रूप से कहने या छापने की स्वतंत्रता

ऐसी किसी भी सभा में या किसी भी व्यक्ति से अपने मन की बात खुलकर कहने की आज़ादी है। अपने विचारों को स्वतंत्र रूप से छापने की

आज़ादी भी है हम भारत वासियों को। पर यदि हम ऐसी चीज़ कहें या छापें जो गलत है और जिससे दूसरों के जीवन को हानि होती है, तो हमें यह कहने या छापने का अधिकार नहीं है।

इन अधिकारों के हनन के भी कुछ उदाहरण हैं।

बम्बई, दिल्ली, कलकत्ता, मद्रास जैसे बड़े शहरों में भारत के दूर दराज के गांवों से लोग रोजगार की तलाश में आते हैं। उन्हें पक्की नौकरी तो नहीं मिलती - कुछ दिनों के लिए एक जगह काम कर लेते हैं, कुछ दिनों के लिए दूसरी जगह। और रहने के लिए उनके पास जगह भी नहीं होती तो वे सड़क के किनारे की पटरियों पर झुग्गियां बना लेते हैं।

कुछ सालों पहले बम्बई के नगर निगम ने, कई वर्षों से पटरियों पर रह रहे 50,000 लोगों को वहां से हटाने के लिए उनकी झुग्गियां तोड़नी शुरू कीं। 1982 में सर्वोच्च न्यायालय में उनकी ओर से मुकदमा किया गया। उनके वकीलों का कहना था कि इन झुग्गीवासियों को तब तक पटरियों से नहीं हटाया जा सकता जब तक कि वे सड़क पर चलने वालों के रास्ते में बाधा न उत्पन्न करें। यदि उन्हें पटरियों पर से हटाया जाए तो उनके व्यवसाय करने और भारत में कहीं भी बस कर रहने की स्वतंत्रता के मौलिक अधिकारों का हनन हो रहा है।

इस मुकदमें के चलते सर्वोच्च न्यायालय ने इन 50,000 लोगों की झुग्गी झोपड़ियां तोड़ने पर रोक लगा दी थी। 1985 में सर्वोच्च न्यायालय ने यह निर्णय लिया कि बम्बई की सड़कों की पटरियों पर रह रहे लोगों के लिए सरकार दूसरी जगह का प्रबन्ध करे और उन्हें पटरियों पर से हटाया जाए। नगर निगम ने उनकी झुग्गीयाँ तोड़ कर उन्हें पटरियों पर से हटा तो दिया पर दूसरी जगह पर उनके रहने का प्रबन्ध ठीक से नहीं किया।

ऐसी स्थिति में क्या किया जाना चाहिए?

क्या झुग्गीवासियों को पटरियों पर से हटाना नहीं था?

मद्रास में भी उनकी झोपड़ियां तोड़ी जा रही थीं। सर्वोच्च न्यायालय ने यहां भी अपने आदेश से नगर निगमकी इस तोड़-फोड़ पर रोक लगवाई।

क्या तुमने कभी ऐसे किस्से सुने हैं जिनमें ऊपर दिए अधिकारों का हनन हुआ है?

जब अखबार या पत्रिकाएं पढ़ो तो उनमें ऐसे किस्सों को ढूंढो।

इस बारे में तुम्हारी क्या राय है–

क्या शहर में काम करने वाले गरीब लोगों को अपनी झुग्गी-झोपड़ी बना के रहने का अधिकार होना चाहिए?

3. शोषण के विरुद्ध अधिकार

इस अधिकार का मतलब है कि किसी व्यक्ति से जोर जबर्दस्ती से काम नहीं लिया जा सकता। यानी यदि कोई व्यक्ति एक काम छोड़ कर दूसरा काम करना चाहता है तो उसे रोका नहीं जा सकता।

इसके अलावा उसे नियम से कम मज़दूरी या खराब परिस्थितियों में जबर्दस्ती काम करने पर मज़बूर नहीं किया जाएगा।

तुम्हारे गांव/शहर में लोगों के और बच्चों के ये अधिकार माने जाते हैं या नहीं?

4. समानता का अधिकार

संविधान के अनुसार सभी भारतीय नागरिकों के साथ समान रूप से व्यवहार किया जाएगा। यह एक मौलिक अधिकार है। इस का मतलब यह है कि किसी भी व्यक्ति को उसके जन्म स्थान के आधार पर या उसके औरत या आदमी होने के आधार पर या उसके किसी विशेष जाति के होने के आधार पर या किसी धर्म के होने के आधार पर सार्वजनिक जगहों पर जैसे दुकानें, होटल या सिनेमा घर में जाने से या कुंओं व तालाबों का पानी उपयोग करने से रोका नहीं जा सकता है। उसी प्रकार किसी नौकरी या व्यवसाय को करने से भी, इन में से किसी आधार पर लोगों को नहीं रोका जा सकता।

उदाहरण के लिए यदि किसी होटल पर कोई महिला नाश्ता करने जाती है और होटल वाला उसे नाश्ता देने से यह कह कर इन्कार कर देता है कि वह अपने होटल पर महिलाओं को खाना नहीं देता तो वह उस महिला के मौलिक अधिकार का हनन कर रहा है।

क्या तुम और उदाहरण सोच सकते हो जिन में इस मौलिक अधिकार का हनन हो रहा हो?

5. अल्पसंख्यकों के विशेष अधिकार

चूंकि सैकड़ों सालों से आदिवासियों व हरिजनों की ज़िन्दगी शोषण व असमानता से भरी रही है, संविधान में ही पिछड़े वर्गों के लोगों को विशेष अधिकार दिए गए हैं। इसीलिए इस तरह जिन धर्मों के लोगों की संख्या कम हैं, उन्हें भी कुछ विशेष अधिकार प्राप्त है।

उदाहरण के लिए आदिवासियों और हरिजनों के लिए संसद व विधान सभा की कुछ सीटें और सरकारी नौकरियों के पद आरक्षित होते हैं। इन पदों पर आदिवासी और हरिजनों के अलावा कोई व्यक्ति नहीं काम कर सकता।

अल्पसंख्यकों यानी (जिस धर्म या समाज के लोग कम हों), को अपने समाज की संस्थाएं खोलने का और अपनी भाषा और संस्कृति को आगे बढ़ाने का अधिकार है।

6. धर्म की स्वतंत्रता का अधिकार

इसी के साथ जुड़ी हुई है धर्म की स्वतंत्रता। भारत में सभी को अपने धर्म का पालन करने की स्वतंत्रता है। किसी को भी, व्यक्तिगत रूप से अपने धार्मिक रीति-रिवाज़ों का पालन करने से नहीं रोका जा सकता है। पर किसी भी सरकारी दफ्तर, शाला या संस्था में किसी भी धर्म के रीति-रिवाज़ नहीं अपनाए जा सकते। इन स्थानों पर (शासकीय शाला, दफ्तर या संस्था में) नमाज़ पढ़ना, पूजा करना, भजन गाना, गुरबानी या किसी धार्मिक ग्रंथ (कुरान, रामायण, बाइबल) का वाचन करवाना, कानून के हिसाब से गलत है।

सरकार का कोई एक धर्म नहीं है। उसे सभी धर्मों के साथ एक सा व्यवहार करना चाहिए। ये सब बातें भी हमारे संविधान में दी गई हैं।

बंधुआ मज़दूरी की प्रथा में मज़दूर के इस मौलिक अधिकार का हनन होता है क्योंकि उसे मजबूर होकर एक ही जमींदार या ठेकेदार के

पास काम करना पड़ता है। क्या तुम बता सकते हो कि यह मजबूरी किन कारणों से होती है?

1982 में जब दिल्ली एशियाड खेल हुए थे, तब बिहार, मध्य प्रदेश, उत्तर प्रदेश से कई मज़दूरों को ठेकेदार काम करने के लिए ले गए थे। वहां बहुत ही कम पैसों में उनसे काम करवाया जा रहा था। उनकी ओर से सर्वोच्च न्यायालय में यह दावा किया गया कि इन मज़दूरों का शोषण के विरुद्ध जो मौलिक अधिकार है, उसका हनन हो रहा है, क्योंकि बहुत कम पैसों पर काम करने के लिए इन्हें मज़बूर किया जा रहा है। साथ ही इन मज़दूरों की स्वतंत्रता और जीवन के अधिकार का भी हनन हो रहा है।

इस मुकदमे में सर्वोच्च न्यायालय ने यह माना कि गरीबी की वजह से यदि कोई कम पैसों में काम करने को तैयार हो जाए तो यह उससे ज़बरदस्ती काम करवाने के बराबर है। इससे उन मज़दूरों के 'शोषण के विरुद्ध' इन के मौलिक अधिकार का हनन होता है। इसीलिए न्यूनतम मजदूरी से कम में यदि कोई काम करवाता है तो सरकार का कर्त्तव्य है कि वह उसे रोके। यदि सरकार ऐसा नहीं करती, तो उसके विरुद्ध इन मज़दूरों के मौलिक अधिकारों की रक्षा न करने के लिए मुकदमा किया जा सकता है।

अब हाली और हरवाहे को एक बार उधार देकर साल दर साल काम करवाते रहना मना हो गया है। इसीलिए मध्य प्रदेश में छत्तीसगढ़ और बिहार व उत्तर प्रदेश के कई इलाकों में बंधुआ मज़दूरों की ओर से 'शोषण के विरुद्ध' अधिकार के हनन को लेकर सर्वोच्च न्यायालय में कई मुकदमें किए गए हैं। ऐसे एक मुकदमे में सर्वोच्च न्यायालय ने मध्य प्रदेश सरकार को निर्देश दिए कि वे छत्तीसगढ़ के 693 बंधुआ मज़दूरों को मुक्त करा कर उनके पुनर्वास का प्रबन्ध करें। हर मज़दूर को इसी आदेश के अंतर्गत 4000 रु. दिए गए।

इसी अधिकार के अंतर्गत 14 वर्ष से कम उम्र के बच्चों को किसी भी फैक्ट्री या खदान में काम नहीं करवाया जा सकता। उन्हें और किसी खतरनाक काम में भी नहीं लगाया जा सकता (जैसे रेल्वे में किसी काम में, या बीड़ी बनाने, माचिस व आतिशबाजी, सीमेन्ट बनाने, गलीचा बनाने, साबुन बनाने , कपड़े की छपाई रंगाई, व बुनाई आदि कामों में)।

7. मौलिक अधिकारों के हनन होने पर सर्वोच्च न्यायालय में मुकदमा करने का अधिकार

कहीं पर भी यदि मौलिक अधिकारों का हनन हो रहा हो तो सीधे सर्वोच्च न्यायालय में मुकदमा करने का अधिकार एक मौलिक अधिकार है। जो मुकदमें मौलिक अधिकारों के हनन पर किए जाते हैं, उन्हें लोकहित के मुकदमें कहते हैं। सरकार का कर्त्तव्य है कि वह भारतीय नागरिकों के मौलिक अधिकारों की रक्षा करे। यदि वह ऐसा नहीं करती तो उसके विरुद्ध लोकहित का मुकदमा किया जा सकता है।

लोकहित के मुकदमों की कुछ और विशेषताएं हैं–

जिनके मौलिक अधिकारों का हनन किया जा रहा है, उनकी ओर से कोई भी व्यक्ति लोकहित के मुकदमे कर सकता है।

इस तरह का एक ही मुकदमा उन सब व्यक्तियों की ओर से किया जा सकता है, जिनके उसी मौलिक अधिकार का हनन हो रहा हो।

उदाहरण के लिए यदि एक जगह पर 50,000 लोग रह रहे हों।

एक बांध के बनने से वह जगह डूब में आ रही है। उन 50,000 लोगों के-

स्वतंत्र जीवन बिताने, स्वतंत्र रूप से व्यवसाय करने व भारत में किसी भी जगह बस कर रहने की स्वतंत्रता के मौलिक अधिकारों का हनन हो रहा है। उन सभी 50,000 लोगों की ओर से एक मुकदमा किया जा सकता है। 50,000 अलग-अलग मुकदमे हर एक व्यक्ति के लिए करने की जरूरत नहीं है। जो भी फैसला सर्वोच्च न्यायालय देती है, वह इन सभी लोगों पर लागू होगा।

यह बात लोगों के लिए कैसे फायदेमंद है?

हमारे मौलिक कर्त्तव्य

हम सबके मौलिक अधिकारों के बारे में तो तुमने पढ़ लिया। इन सब अधिकारों की रक्षा करना हमारी सरकार का कर्त्तव्य है। पर इन अधिकारों को पाने के लिए हमें भी कुछ कर्त्तव्य निभाने पड़ते हैं। समाज के प्रति हमारे जो कर्त्तव्य संविधान में लिखे हैं वे इस प्रकार हैं।

1. संविधान का पालन करना

संविधान का पालन करना हमारा कर्त्तव्य है। यानी हमें संविधान में लिखी सभी चीज़ों का पालन करना चाहिए। राष्ट्रीय झण्डे और राष्ट्रीय गीत का अपमान नहीं करना चाहिए।

पर यदि संविधान में कुछ ऐसी भी चीज़ें हैं जिससे अधिकांश लोगों को नुकसान होता है, तो फिर हमें क्या करना चाहिए? संविधान की ऐसी चीज़ों को बदलने के भी तरीके हैं। ये तरीके संविधान में ही दिए गए हैं।

2. स्वतंत्रता आन्दोलन के आदर्शों पर चलना

भारत को अंग्रेज़ शासन से स्वतंत्रता दिलाने के लिए लाखों भारतीयों ने बहुत संघर्ष किया था। इस संघर्ष में उन्होंने कुछ आदर्श अपनाए थे। जैसे सच को खोज कर उसके लिए लड़ना। साधारण भारतीय लोगों और गरीबों के हितों के लिए आवाज़ उठाना। अन्याय सहन न करना। इन सब आदर्शों पर चलना हमारा कर्त्तव्य है।

3. पर्यावरण की रक्षा करना

यदि किसी फैक्ट्री से निकलने वाला गंदा पानी किसी नदी में मिलता है, या कहीं बड़े बांध बनने से पर्यावरण का नुकसान हो रहा है, जंगल कट रहा है, तो हम सबका कर्त्तव्य है कि ऐसा न होने दें।

4. महिलाओं का सम्मान करना और उनका अपमान रोकना

जहां भी महिलाओं का अपमान होता है, हमारा कर्त्तव्य है कि हम उसका विरोध करें।

यदि कोई भी लड़कियों को छेड़ता है या दहेज लेता है, या अपनी पत्नी को पीटता है तो वह एक दण्डनीय अपराध कर रहा है। हमारा कर्त्तव्य है कि हम उसे रोकें या ऐसे अपराध करने वाले व्यक्ति को सज़ा दिलवाएँ।

5. भारत के सभी क्षेत्रों, धर्मों और भाषाओं के लोगों के बीच शांति और सद्‌भाव बनाए रखना भी एक कर्त्तव्य है।

हमारा कर्त्तव्य है कि हम कोई भी सांप्रदायिक, जातीय या क्षेत्रीय दंगों को फैलने से रोकें।

यदि कोई ऐसे दंगे करवाता है या फैलाता है, तो उन्हें पकड़वाना और सज़ा दिलवाना हमारा कर्त्तव्य है।

6. भारत की एकता बनाए रखना

इस तरह, भारत में रह रहे सभी लोगों के बीच सद्‌भाव रखकर, भारत की एकता को बनाए रखना भी हमारा कर्त्तव्य है।

7. वैज्ञानिक मानसिकता व मानवता का विकास करना

वैज्ञानिक मानसिकता, मानवता और जिज्ञासा का विकास करना, हर भारतीय का कर्त्तव्य है। आसपास हो रही प्रक्रियाओं और घटनाओं के कारण ढूंढना, सवाल करना, बिना सोचे समझे किसी की बात न मान लेना, यही सब वैज्ञानिक मानसिकता को विकसित करते हैं। और मानवता का मतलब है सभी मनुष्यों का आदर व सम्मान करना। सभी मनुष्यों के साथ, हमारा ऐसा ही व्यवहार होना चाहिए।

8. देश की रक्षा करना

अपने देश की रक्षा करना हमारा कर्त्तव्य है। यही नहीं अपने कामों से अपने देश को हर क्षेत्र में (कृषि,उद्योग, शिक्षा, विज्ञान, खेलकूद) आगे बढ़ाना भी हमारा कर्त्तव्य है।

9. सार्वजनिक सम्पत्ति की रक्षा करना

सार्वजनिक सम्पत्ति, जैसे बस, अस्पताल, स्कूल आदि की रक्षा करना,उन्हें अच्छी स्थिति में रखना ये हमारे कर्त्तव्य हैं।

तुम अपने गाँव व शहर के लोगों के व्यवहार पर चर्चा करके समझो कि किन कर्त्तव्यों का पालन किया जाता है और किन कर्त्तव्यों का उल्लंघन होता है?

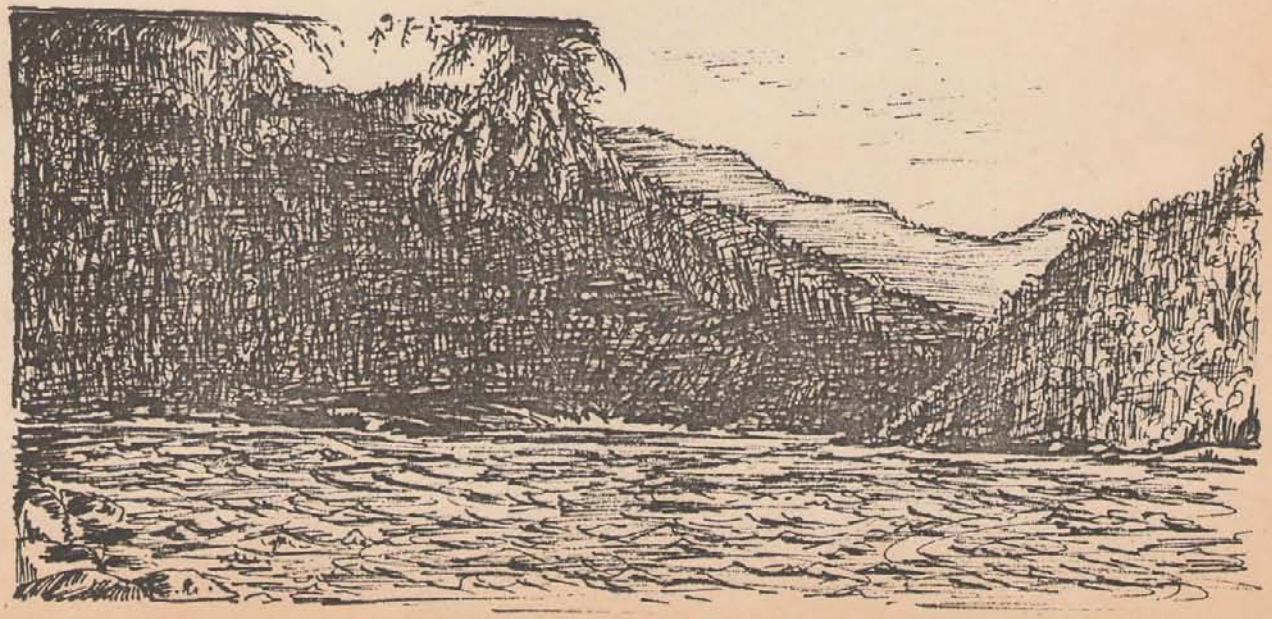

मध्य प्रदेश में अधिकार अभियान
आवंटित जमीन पर असल कब्जा दिलाने का संकल्प

- -

o प्रदेश में जिन जरूरत मंद लोगों को सरकार ने अभी तक विभिन्न कार्यक्रमों के अन्तर्गत जमीन के पट्टे दिए हैं, उन्हें जमीन पर असल कब्जा दिलाने के लिए पूरे प्रदेश में नेहरू जी की जन्म शताब्दी 14 नवम्बर से अधिकार अभियान । एक साल के भीतर पक्के तौर पर जमीन का कब्जा दिलाया जाएगा ।

o इस अभियान के अन्तर्गत जिला कलेक्टर, जिले के हर गाँव का सर्वेक्षण कर ऐसे लोगों का पता लगाएंगें जिन्हें जमीन या भूखंड आवंटन के बाद वास्तविक कब्जा नहीं मिला है, अथवा कब्जा मिलने के बाद उन्हें आवंटित भूमि से गैर कानूनी तरीके से बेदखल कर दिया गया है ।

o आवंटित भूमि पर कब्जा दिलाने में सहूलियत के उद्देश्य से भू-राजस्व संहिता में संशोधन का अध्यादेश जारी कर तहसीलदार को यह अधिकार दिया गया है कि वह आवेदन पत्र मिलने पर अथवा खुद अपनी ओर से भूमि के वास्तविक हकदार को कब्जा दिला सकेंगे ।

o तहसीलदार के आदेश पर बेजा कब्जा न छोड़ने पर या कब्जा दिलाने की कार्यवाई में किसी प्रकार की बाधा पैदा करने वाले को अदालत की तीन वर्ष तक की जेल, अथवा जुर्माना या दोनों दंड का प्रावधान ।

o अधिकार अभियान के तहत आवंटित भूमि का कब्जा दिलाने के साथ ही इन वर्गों को उनके अधिकारों के प्रति जागृत भी किया जाएगा ।

o जमीन का पट्टा चाहे खेती के लिए हो या मकान के लिए । कब्जा न मिलने की शिकायत तहसीलदार, एस॰डी॰ओ॰ या जिला कलेक्टर से की जा सकती है ।

- -
अधिकार अभियान - गरीबों के हकों की पूरी हिफाजत
- -

जं०स०स०/88

डाक पंजीयन क्रमांक जे-2/म0प्र0/33/22 दिनांक 5/12/86 होशंगाबाद
एकलव्य,ई-1/208,अरेरा कालोनी,भोपाल द्वारा प्रकाशित एवं भंडारी
आफसेट प्रिंटर्स भोपाल द्वारा मुद्रित
संपादन एवं वितरण:एकलव्य,कोठी बाजार,होशंगाबाद 461 001